२८०३

ओ३म् नमः शिवाय

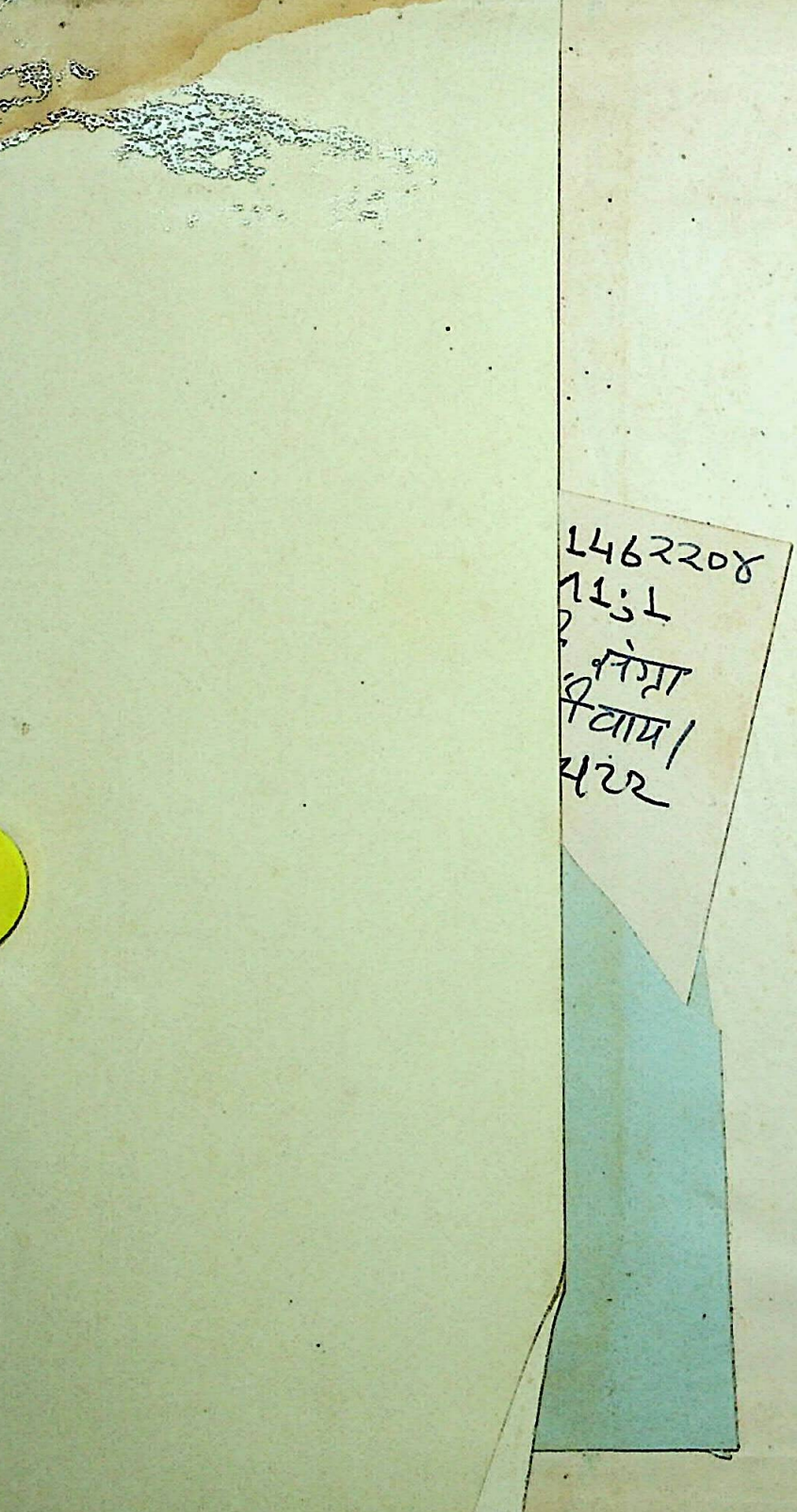

1462208
11;1
गंगा
िचाय/
५२२

Q23:4146
152M1;1
2208

ओ३म्
नमः शिवाय

ओ३म्
नमः शिवाय

मण्डेलिया परमार्थ कोष
जियाजीराव कॉटन मिल्स
ग्वालियर, म० प्र०

O23:4146
152M1;1

मुख्य विक्रेता

१. सस्ता साहित्य मंडल,
कनाट सर्कस, नयी दिल्ली

२. मंत्री, मण्डेलिया परमार्थ कोष
ग्वालियर (म० प्र०)

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय
आगत क्रमांक 2204
दिनांक

प्रथम संस्करण : १९८१

मूल्य : पाँच रुपये

•

मुद्रक
भारती प्रिण्टर्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-११००३२

प्रकाशकीय

हर्ष का विषय है कि 'ओ३म् नमो भगवते वासुदेवाय' तथा 'वंदउँ सीताराम पद' और 'साधना-पथ' इन तीनों स्तुति-संकलनों का धर्मानुरागी पाठकों ने हार्दिक स्वागत किया है। इन पुस्तकों के दो-दो, तीन-तीन संस्करण हो चुके हैं। मित्रों ने एक और सुझाव देकर हमें प्रोत्साहित किया है—यह कि शिव-स्तुतियों का भी एक संकलन प्रकाशित किया जाये। यह सुझाव स्वागत-योग्य लगा। श्री वियोगी हरि से हमने निवेदन किया कि वे पूर्वोक्त स्तुति-संकलनों की तरह शिव-स्तुतियों का भी संकलन कर दें। प्रस्ताव को उन्होंने स्वीकार कर लिया, फल-स्वरूप 'ओ३म् नमः शिवाय' नामक यह स्तुति-संकलन प्रस्तुत है।

कांची-कामकोटि पीठ
के
जगद्गुरु शंकराचार्य
श्री चन्द्रशेखरेन्द्र सरस्वती
को
श्रद्धापूर्वक समर्पित

कांची-कामकोटि पीठ के जगद्गुरु शंकराचार्य

जय साम्ब सदाशिव

शिवतत्त्व का विचार एवं ध्यान करते ही विश्व के संहार या प्रलय का दृश्य सामने आ उतरता है। रुद्र का तीसरा नेत्र इसी संहार-लीला का द्योतक कहा गया है। परन्तु केवल संहार में शिवतत्त्व सीमित नहीं है, वह स्रष्टा भी है और पालक भी। वह ब्रह्मा भी है और विष्णु भी। तीनों एक ही परम तत्त्व में गुँथे हुए हैं। भिन्न न होकर तीनों अभिन्न हैं। तीनों के लिए उन्हीं सब नामों और विशेषणों का प्रयोग किया जाता है, जोकि ब्रह्म के लिए प्रयुक्त होते हैं जैसे अनादि, अनंत, अनवद्य, अखंड, अव्यक्त, अव्यय, कलातीत, निर्गुण, निर्विकल्प, सच्चिदानंदघन आदि। 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' अर्थात् ज्ञानीजनों ने अनेक प्रकार से एक ही सत्तत्त्व का निरूपण किया है। जिस उपासक की जैसी जो श्रद्धा होती है, उसी रूप में वह अपने उपास्य को देखता और भजता है।

सभी आस्तिक दर्शनों ने निर्गुण शिव का एक समान विवेचन किया है। वेदों, उपनिषदों तथा पुराणों में निर्गुण शिवतत्त्व का अनेक विध वर्णन मिलता है।

शिवलिंग की महिमा और उपासना सर्वत्र सर्वव्यापक रही है। जैसे निराकार 'शून्य' को गणित-विज्ञान में एक आकार दिया गया है, उसी प्रकार शिवतत्त्व का प्रतीक लिंग माना गया है। कहा गया है कि समस्त ब्रह्माण्ड शिवलिंग है। सारी सृष्ट

उसके ही अन्तर्गत है, उसमय है, और अंत में उसी में उसका लय भी होता है। शिवलिंग का ऐसा वर्णन स्कन्द-पुराण के निम्न श्लोक से अभिव्यक्त होता है—

आकाशं लिंगमित्याहुः पृथिवी तस्य पीठिका।
आलयः सर्वदेवानां लयनाल्लिंगमुच्यते॥

अर्थात् आकाश लिंग है, पृथिवी उसकी पीठिका है, सब देवताओं का यह आलय है। इसमें सबका लय होता है, इसी-लिए इसे लिंग कहते हैं।

शिवतत्त्व के प्रतीक लिंग की उपासना और पूजा सारे भारत में और भारत के बाहर अनेक देशों में भी किसी-न-किसी रूप में प्रचलित थी। रोमक, यूनान, मिश्र, चीन और अमेरिका के महाद्वीपों में भी लिंग-पूजा का चलन था।[1]

यह हुआ निर्गुण निराकार शिवतत्त्व। इस तक देहाभिमानी उपासकों का पहुँचना बड़ा कठिन है। अव्यक्त में चित्त का लगाना दुष्कर है। देहधारियों के लिए तो समुण, साकार उपास्य चाहिए। तात्पर्य है ऐसे भगवान् शिव से, जो उमापति हैं, जिनके मस्तक पर चन्द्रलेखा है, जिनकी जटाओं से गंगा प्रवाहित होती है, जो वृषभ पर आरूढ़ हैं, जिनके हाथ में त्रिशूल और पिनाक है, जिनके गौर शरीर पर भस्म का लेप शोभा देता है, और जो अपने भक्तों को भक्ति तथा मुक्ति देते कभी अघाते नहीं।

समुण रूप में भगवान् शिव नटराज हैं, अर्द्धनारीश्वर हैं और विश्वनाथ हैं। देवों के देव ऐसे महादेव हैं वे, जो एकाध अंजलि जल से या दो-चार बेल के पत्तों, और आक के एक पत्ते से ही रीझ जाते हैं, प्रसन्न होते उन्हें देर नहीं लगती। ब्रह्माजी

---

१. रामदास गौड़—लिंग रहस्य, संक्षिप्त शिवपुराणांक, पृ० ५९८ से पृ० ६०० तक

हैरान हैं कि शंकर मेरा कुछ भी अहसान नहीं मानते कि उनके बनाये इन्द्रों के लिए मैं क्या-क्या नहीं रच रहा हूँ, मैं और कितने स्वर्ग रचूँ ?

नांगौ फिरै कहै माँगतौ देखि 'न खांगौ कछू जनि मागिए थोरो ।'
रांकनि नाकप रीझि करै, 'तुलसी' जग जो जुरै जाचक जोरो ॥
"नाक सँवारत आयो हौं नाकहि, नाहिं पिनाकिहि नेकु निहोरो ।"
बह्मा कहै "गिरिजा ! सिखवो, पति रावरो दानि है बावरो भोरो ॥"

ब्रह्मा कहते हैं—"हे पार्वती ! अपने पतिदेव को तुम समझा दो न, वह बड़ा बावला और भोला-भाला दानी है । खुद तो नंगा घूमता रहता है, पर जहाँ किसी याचक को देखा तो उससे कहता है कि 'थोड़ा मत माँगना, हमारे यहाँ किसी वस्तु की कमी नहीं ।' दुनियाभर में जितने याचक एक जगह एकत्र किये जा सकते हों, उन सब कंगालों को प्रसन्न होकर वह नाकपति अर्थात् इन्द्र बना देता है । उन सबके लिए मैं कितने स्वर्ग रचूँ ? मेरा तो नाकों दम आ गया है । इतने पर भी पिनाकधारी शंकर मेरा कुछ भी अहसान नहीं मानते कि उनके बनाये इन्द्रों के लिए मैं क्या-क्या नहीं रच रहा हूँ !"

औढरदानी शंकर की रीझ और अनुपम दान की बात निराली है । जिस दानी के पास अपना कुछ भी नहीं, वह भोला-नाथ अपने भक्त को न जाने क्या-क्या दे डालता है । बेल के दो पत्ते चढ़ा दिये, और भोलानाथ ने प्रसन्न होकर भक्त को इतना सारा दान दे दिया :

स्यंदन, गयंद, बाजि—राजि, भले भले भट,
धन-धाम-निकर, करनि हू न पूजे ज्वै ।
बनिता बिनीत, पूत पावन सोहावन, औ,
बिनय बिबेक बिद्या सुभग सरीर ज्वै ।

यहाँ ऐसो सुख, परलोक सिवलोक औक,
ताको फल 'तुलसी' सों सुनौ सावधान ह्वै ।
जाने, बिनु जानै, कै रिसाने, केलि कबहुँक,
सिबहि चढ़ाये ह्वै हैं बेल के पतौवा द्वै ॥

सावधान होकर सुनो कि जिसे इतना बड़ा वैभव प्राप्त हुआ है उसने अनजान में या नाराज़ होकर अथवा खेल में ही कभी शिवजी पर बेल के दो पत्र चढ़ा दिये होंगे। उसका वैभव ज़रा देखो तो, रथ, हाथियों और घोड़ों की कतारें उसके घर में खड़ी हैं, बड़े-बड़े योद्धा उपस्थित हैं और धन और धाम की इतनी अधिकता है कि पूछो नहीं। उसकी करनी की भी कौन बराबरी कर सकता है? पत्नी उसकी बड़ी ही विनीत, पुत्र अत्यन्त सदाचारी और सुन्दर हैं, शरीर उसका अति सुन्दर है, और उसे विनय, विवेक तथा विद्या सभी प्राप्त हो गये हैं।

तब—

को जाचिए संभु तजि आन।
दीनदयालु भगत-आरति-हर, सब प्रकार समरथ भगवान ॥

भगवान् शिव से याचना करके याचक फिर याचक नहीं रहता। किन्तु याचना की जाये तो किस वस्तु की? क्या उस वस्तु की नहीं, जिसे पाकर फिर पाने को कुछ नहीं रह जाता! वह वस्तु है अनन्य भगवद्भक्ति—भक्ति चाहे हर की हो, चाहे हरि की। हर और हरि में कहाँ कोई भेद है।

भगवान् शंकर की महिमा पर अनेक स्तोत्र और स्तुतियाँ संस्कृत में तथा विभिन्न लोक-भाषाओं में रची गई हैं। प्रस्तुत 'ओ३म् नमः शिवाय' में जो स्तुतियाँ संकलित की गई हैं वे महाभारत के अनुशासन पर्व से, शिवपुराण से तथा बृहत् स्तोत्र-रत्नाकर में से ली गई हैं।

स्तुतियों के अनन्तर शिव-सहस्रनाम तथा विष्णु-सहस्रनाम ये

दोनों स्तोत्र महाभारत के अनुशासन पर्व में हैं, जिनसे हरि-हर का ऐक्य-भाव पूर्णतया सिद्ध होता है।

अन्त में विनय-पत्रिका में से अर्थ-समेत चार पद भी संकलित कर दिये गये हैं।

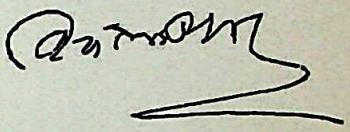

स्तुति - सूची

१.	श्रीकृष्ण द्वारा स्तुति	१५
२.	संध्या द्वारा स्तुति	२०
३.	ब्रह्मर्षि उपमन्यु द्वारा स्तुति	२५
४.	महात्मा तण्डि द्वारा स्तुति	३८
५.	असित मुनि द्वारा स्तुति	४८
६.	हिमालय द्वारा स्तुति	५०
७.	दक्ष द्वारा स्तुति	५२
८.	श्रीशंकराचार्य द्वारा स्तुति	५९
९.	पुष्पदन्त द्वारा स्तुति	६३
१०.	शिव-पंचाक्षर स्तुति	७२
११.	द्वादश ज्योतिर्लिंगों की स्तुति	७४

भवानी शंकरौ वन्दे
श्रद्धा विश्वास रूपिणौ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति
सिद्धाः स्वान्तस्थमीश्वरम्॥

नमः रेणुकेश्वराय

श्रीकृष्ण द्वारा स्तुति

[एक बार युधिष्ठिर ने भीष्म पितामह से भगवान् शिव के गुणों का वर्णन करने के लिए कहा। भीष्म ने अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए कहा :]

अशक्तोऽहं गुणान् वक्तुं महादेवस्य धीमतः।
यो हि सर्वगतो देवो न च सर्वत्र दृश्यते ॥१॥
चिन्त्यते यो योगविद्भिर्ऋषिभिस्तत्वदर्शिभिः।
अक्षरं परमं ब्रह्म असच्च सदसच्च यः ॥२॥
को हि शक्तो गुणान् वक्तुं देवदेवस्य धीमतः।
गर्भजन्मजरायुक्तो मर्त्यो मृत्युसमन्वितः ॥३॥

मैं महादेवजी के गुणों का वर्णन करने में असमर्थ हूँ।

महादेव शिव प्रकृति से परे और पुरुष से भी विलक्षण हैं। योग-वेत्ता, तत्त्वदर्शी बड़े-बड़े ऋषि जिनका चिन्तन करते हैं, जो अविनाशी हैं, जो परमब्रह्म हैं और सत् और असत् दोनों ही जिनके स्वरूप हैं,

उन देवों के भी देव शिव के गुणों का वर्णन कौन मनुष्य कर सकता है, जो गर्भ, जन्म, जरा और मृत्यु से ग्रस्त है ?

शंख, चक्र और गदाधारी नारायण के सिवाय मुझ जैसा कौन

मनुष्य शिव के परम तत्त्व को जान सकता है। भगवान् रुद्र के अनन्य भक्त होने के कारण ही श्रीकृष्ण ने सारे जगत् को व्याप्त कर रखा है। सो महाबाहु श्रीकृष्ण ही भगवान् महेश्वर के गुणों और उनके ऐश्वर्य का पूर्णतया वर्णन करने में समर्थ हैं।

महर्षि उपमन्यु द्वारा पाशुपत-ज्ञान प्राप्त कर श्रीकृष्ण ने भगवान् शिव की अनन्य भाव से आराधना की। शिव के प्रकट होने पर श्रीकृष्ण ने प्रणाम किया और इस प्रकार उनकी स्तुति की :]

नमोऽस्तु ते शाश्वत सर्वयोने
ब्रह्माधिपं त्वामृषयो वदन्ति।
तपश्च सत्वं च रजस्तमश्च
त्वामेव सत्यं च वदन्ति सन्तः ॥१॥

सबके कारणभूत सनातन परमेश्वर! आपको नमस्कार है। ऋषि आपको ब्रह्माजी का भी अधिपति बताते हैं। साधु पुरुष आपको ही तप, सत्वगुण, रजोगुण, तमोगुण तथा सत्यस्वरूप कहते हैं।

त्वं वै ब्रह्मा च रुद्रश्च वरुणोऽग्निर्मनुर्भवः।
धाता त्वष्टा विधाता च त्वं प्रभुः सर्वतोमुखः ॥२॥

आप ही ब्रह्मा, रुद्र, वरुण, अग्नि, मनु, शिव, धाता, विधाता और त्वष्टा है। आप ही सब ओर मुखवाले परमेश्वर हैं।

त्वत्तो जातानि भूतानि स्थावराणि चराणि च।
त्वया सृष्टमिदं कृत्स्नं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥३॥

समस्त चराचर प्राणी आप ही से उत्पन्न हुए हैं। आपने ही स्थावर-जंगम प्राणियों सहित इस समस्त त्रिलोकी की सृष्टि की है।

यानीन्द्रियाणीह मनश्च कृत्स्नं
ये वायवः सप्त तथैव चाग्नयः।
ये देवसंस्थास्तवदेवताश्च
तस्मात् परं त्वामृषयो वदन्ति ॥४॥

यहाँ जो-जो इन्द्रियाँ, जो सम्पूर्ण मन, जो समस्त वायु और सात

अग्नियाँ हैं, जो देवसमुदाय के अन्दर रहनेवाले स्तवन के योग्य देवता हैं, उन सबसे परे आपकी स्थिति है। ऋषिगण आपके विषय में ऐसा ही कहते हैं।

वेदाश्च यज्ञाः सोमश्च दक्षिणा पावको हविः।
यज्ञोपगं च यत् किंचिद् भगवांस्तदसंशयम् ॥५॥

वेद, यज्ञ, सोम, दक्षिणा, अग्नि, हविष्य तथा जो कुछ भी यज्ञोपयोगी सामग्री है, वह सब आप भगवान् ही हैं, इसमें संशय नहीं है।

इष्टं दत्तमधीतं च व्रतानि नियमाश्च ये।
ह्रीः कीर्तिः श्रीर्द्युतिस्तुष्टिः सिद्धिश्चैव तदर्पणी ॥६॥

यज्ञ, दान, अध्ययन, व्रत और नियम, लज्जा, कीर्ति, श्री, द्युति, तुष्टि तथा सिद्धि—ये सब आपके स्वरूप की प्राप्ति करानेवाले हैं।

कामः क्रोधो भयं लोभो मदः स्तम्भोऽथ मत्सरः।
आधयो व्याधयश्चैव भगवंस्तनवस्तव ॥७॥

भगवन्! काम, क्रोध, भय, लोभ, मद, स्तब्धता, मात्सर्य, आधि और व्याधि—ये सब आपके ही शरीर हैं।

कृतिर्विकारः प्रणयः प्रधानं बीजमव्ययम्।
मनसः परमा योनिः प्रभावश्चापि शाश्वतः ॥८॥

क्रिया, विकार, प्रणय, प्रधान, अविनाशी बीज, मन का परम कारण और सनातन प्रभाव—ये भी आपके ही स्वरूप हैं।

अव्यक्तः पावनोऽचिन्त्यः सहस्रांशुर्हिरण्मयः।
आदिर्गणानां सर्वेषां भवान् वै जीविताश्रयः ॥९॥

अव्यक्त, पावन, अचिन्त्य, हिरण्मय सूर्यस्वरूप आप ही समस्त गणों के आदि कारण तथा जीवन के आश्रय हैं।

महानात्मा मतिर्ब्रह्मा विश्वः शम्भुः स्वयम्भुवः।
बुद्धिः प्रज्ञोपलब्धिश्च संवित् ख्यातिर्धृतिः स्मृतिः ॥१०॥
पर्यायवाचकैः शब्दैर्महानात्मा विभाव्यते।
त्वां बुद्ध्वा ब्राह्मणो वेदात् प्रमोहं विनियच्छति ॥११॥

महान्, आत्मा, मति, ब्रह्मा, विश्व, शम्भु, स्वयम्भू, बुद्धि, प्रज्ञा,

उपलब्धि, संवित्, ख्याति, धृति और स्मृति—इन चौदह पर्यायवाची शब्दों द्वारा आप परमात्मा ही प्रकाशित होते हैं। वेद से आपका बोध प्राप्त करके ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मण मोह का सर्वथा नाश कर देता है।

हृदयं सर्वभूतानां क्षेत्रज्ञस्त्वमृषिस्तुतः।
सर्वतः पाणिपादस्त्वं सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः ॥१२॥

ऋषियों द्वारा प्रशंसित आप ही सम्पूर्ण भूतों के हृदय में स्थित क्षेत्रज्ञ हैं। आपके सब ओर हाथ-पैर हैं। सब ओर नेत्र, मस्तक और मुख हैं।

सर्वतः श्रुतिमाँल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठसि।
फलं त्वमसि तिग्मांशोर्निमेषादिषु कर्मसु ॥१३॥

आपके सब ओर कान हैं और जगत् में आप सबको व्याप्त करके स्थित हैं। जीव के आँख मींचने और खोलने से लेकर जितने कर्म हैं, उनके फल आप ही हैं।

त्वं वै प्रभार्चिः पुरुषः सर्वस्य हृदि संश्रितः।
अणिमा महिमा प्राप्तिरीशानो ज्योतिरव्ययः ॥१४॥

आप अविनाशी परमेश्वर ही सूर्य की प्रभा और अग्नि की ज्वाला हैं। आप ही सबके हृदय में आत्मा रूप से निवास करते हैं। अणिमा, महिमा और प्राप्ति आदि सिद्धियाँ तथा ज्योति भी आप ही हैं।

त्वयि बुद्धिर्मतिर्लोकाः प्रपन्नाः संश्रिताश्च ये।
ध्यानिनो नित्ययोगाश्च सत्यसत्वा जितेन्द्रियाः ॥१५॥

आपमें बोध और मनन की शक्ति विद्यमान है। जो लोग आपकी शरण में आकर सर्वथा आपके आश्रित रहते हैं, वे ध्यानपरायण, नित्य योगयुक्त, सत्यसंकल्प तथा जितेन्द्रिय होते हैं।

यस्त्वां ध्रुवं वेदयते गुहाशयं
प्रभुं पुराणं पुरुषं च विग्रहम्।
हिरण्मयं बुद्धिमतां परां गतिं
स बुद्धिमान् बुद्धिमतीत्य तिष्ठति ॥१६॥

जो आपको अपनी हृदयगुहा में स्थित आत्मा, प्रभु, पुराण-पुरुष, मूर्तिमान् परब्रह्म, हिरण्मय पुरुष और बुद्धिमानों की परम गतिरूप में निश्चित भाव से जानता है, वही बुद्धिमान् लौकिक बुद्धि का उल्लंघन करके परमात्मभाव में प्रतिष्ठित होता है।

विदित्वा सप्त सूक्ष्माणि षडंगं त्वां च मूर्तितः।
प्रधानविधियोगस्थस्त्वामेव विशते बुधः ॥१७॥

विद्वान् पुरुष महत्तत्त्व, अहंकार और पंचतन्मात्रा—इन सात सूक्ष्म तत्त्वों को जानकर आपके स्वरूपभूत छः अंगों का बोध प्राप्त करके प्रमुख विधियोग का आश्रय ले आप में ही प्रवेश करते हैं।

[म० भा० अनुशासन पर्व अ० १४

सन्ध्या द्वारा स्तुति

[कथा है कि संध्या ब्रह्मा की मानस-पुत्री थी। वह अत्यन्त सुन्दरी थी। संध्या समय उसका सौन्दर्य अत्यधिक बढ़ जाता था। कहते हैं कि एक बार संध्या के मन में काम-भाव आ गया। तब उसने निश्चय किया कि मैं अपने शरीर की अग्नि में आहुति दे दूंगी इसलिए कि किसी देह-धारी में पैदा होने पर कामवासना उत्पन्न न हो। यौवन आने के पहले कामवासना का प्रभाव उस पर न पड़े, मैं ऐसी मर्यादा निर्धारित करूँगी। चन्द्रभाग नामक पर्वत पर जाकर उसने तप करने का मन में निश्चय किया। एक दिन ब्रह्मर्षि वसिष्ठ वहाँ पहुँचे और उन्होंने संध्या से पूछा कि तुम कौन हो? उसने उत्तर दिया कि मैं ब्रह्मा की पुत्री हूँ और मेरा नाम संध्या है। मैं यहाँ तप करने आयी हूँ। वसिष्ठ ने उसे 'ओ३म् नमः शिवाय' मन्त्र का जप करने का उपदेश दिया। उसके तप से भगवान् शिव प्रकट हुए और उसने भक्तिभावपूर्वक स्तुति की। शिवजी संध्या को वरदान देकर अन्तर्धान हो गये। भगवान् का वर पाकर वह मुनि मेधातिथि के यज्ञ में जा पहुँची। जिस तेजस्वी ब्रह्मचारी ने उसे 'ओ३म् नमः शिवाय' मन्त्र की दीक्षा देकर तप करने का उपदेश दिया था उसका संध्या ने वहाँ स्मरण किया। वह अदृश्य

रूप में थी उसे किसीने नहीं देखा। मेधातिथि मुनि के यज्ञ में संध्या उनकी पुत्री के रूप में उत्पन्न हुई। उसका नाम उन्होंने अरुन्धती रखा। उसने पूर्व संकल्प के अनुसार ब्रह्मर्षि वसिष्ठ को पति के रूप में वरण किया।

संध्या की इस कथा का विस्तारपूर्वक उल्लेख शिव-पुराण के अन्तर्गत रुद्र-संहिता में आया है।]

निराकारं ज्ञानगम्यं परं यन्नैव स्थूलं नापि सूक्ष्मं न चोच्चम्।
अन्तश्चिन्त्यं योगिभिस्तस्य रूपं तस्मै तुभ्यं लोककर्त्रे नमोऽस्तु॥

जो निराकार और परम ज्ञानगम्य हैं, जो न तो स्थूल हैं, न सूक्ष्म हैं और न उच्च ही, जिनके स्वरूप का योगीजन अपने हृदय के भीतर चिन्तन करते हैं, उन्हीं लोकस्रष्टा आप भगवान् शिव को नमस्कार है।

शर्वं शान्तं निर्मलं निर्विकारं ज्ञानगम्यं स्वप्रकाशेऽविकारम्।
खाध्वप्रख्यं ध्वान्तमार्गात्परस्ताद् रूपं यस्य त्वां नमामि प्रसन्नम्॥

जिन्हें शर्व कहते हैं, जो शान्तस्वरूप, निर्मल, निर्विकार और ज्ञानगम्य हैं, जो अपने ही प्रकाश से प्रकाशित होते हैं, जिनमें विकार का अत्यन्त अभाव है, जो आकाशमार्ग की भाँति निर्गुण, निराकार बताये गये हैं तथा जिनका रूप अज्ञानान्धकार मार्ग से सर्वथा परे है, ऐसे नित्यप्रसन्न आप भगवान् शिव को मैं प्रणाम करती हूँ।

एकं शुद्धं दीप्यमानं विनाजां चिदानन्दं सहजं चाविकारि।
नित्यानन्दं सत्यभूतिप्रसन्नं यस्य श्रीदं रूपमस्मै नमस्ते॥

जिनका रूप एक (अद्वितीय), शुद्ध, बिना माया के प्रकाशमान, सच्चिदानन्दमय, सहज निर्विकार, नित्यानन्दमय, सत्य, ऐश्वर्य से युक्त, प्रसन्न तथा श्री संपदा को देनेवाला है, ऐसे आप भगवान् शिव को नमस्कार है।

विद्याकारोद्भावनीयं प्रभिन्नं सत्त्वच्छन्दं ध्येयमात्मस्वरूपम्।
सारं पारं पावनानां पवित्रं तस्मै रूपं यस्य चैवं नमस्ते॥

जिनके स्वरूप की ज्ञानरूप से ही उद्भावना की जा सकती है, जो इस जगत् से सर्वथा भिन्न है और सत्वप्रधान, ध्यान योग्य, आत्म-स्वरूप, सारभूत, सबको पार लगानेवाला तथा पवित्र वस्तुओं में भी परम पवित्र हैं, ऐसे आप महेश्वर को मेरा नमस्कार है।

यस्त्वाकारं शुद्धरूपं मनोज्ञं रत्नाकल्पं स्वच्छकर्पूरगौरम्।
इष्टाभीती शूलमुण्डे दधानं हस्तैर्नमो योगयुक्ताय तुभ्यम्॥

आपका जो स्वरूप शुद्ध, मनोहर, रत्नमय आभूषणों से विभूषित तथा स्वच्छ कर्पूर के समान गौरवर्ण है, जिसने अपने हाथों में वर, अभय, शूल और मुण्ड धारण कर रखा है, उस दिव्य, चिन्मय, सगुण, साकार विग्रह से सुशोभित आप योगयुक्त भगवान् शिव को नमस्कार है।

गगनं भूर्दिशश्चैव सलिलं ज्योतिरेव च।
पुनः कालश्च रूपाणि यस्य तुभ्यं नमोऽस्तु ते॥

आकाश, पृथ्वी, दिशाएँ, जल, तेज तथा काल—ये जिनके रूप हैं, ऐसे आप परमेश्वर को नमस्कार है।

प्रधानपुरुषौ यस्य कायत्वेन विनिर्गतौ।
तस्मादव्यक्तरूपाय शंकराय नमो नमः॥

प्रधान (प्रकृति) और पुरुष जिनके शरीर रूप से प्रकट हुए हैं अर्थात् वे दोनों जिनके शरीर हैं, इसीलिए जिनका यथार्थ रूप अव्यक्त (बुद्धि आदि से परे) है, उन भगवान् शंकर को बारंबार नमस्कार है।

यो ब्रह्मा कुरुते सृष्टिं यो विष्णुः कुरुते स्थितिम्।
संहरिष्यति यो रुद्रस्तस्मै तुभ्यं नमो नमः॥

जो ब्रह्मा होकर जगत् की सृष्टि करते हैं, जो विष्णु होकर संसार का पालन करते हैं तथा जो रुद्र होकर अन्त में इस सृष्टि का संहार करेंगे, उन्हीं आप भगवान् सदाशिव को बारंबार नमस्कार है।

नमो नमः कारणकारणाय दिव्यामृतज्ञानविभूतिदाय।
समस्तलोकान्तरभूतिदाय प्रकाशरूपाय परात्पराय॥

जो कारण के भी कारण हैं, दिव्य अमृतरूप ज्ञान तथा अणिमा

आदि ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले हैं, समस्त लोकान्तरों का वैभव देने-वाले हैं, स्वयं प्रकाशरूप हैं तथा प्रकृति से भी परे हैं, उन परमेश्वर शिव को नमस्कार है, नमस्कार है।

यस्यापरं नो जगदुच्यते पदात् क्षितिर्दिशः सूर्य इन्दुर्मनोजः।
बहिर्मुखा नाभितश्चान्तरिक्षं तस्मै तुभ्यं शम्भवे मे नमोऽस्तु॥

यह जगत् जिनसे भिन्न नहीं कहा जाता, जिनके चरणों से पृथ्वी तथा अन्यान्य अंगों से सम्पूर्ण दिशाएँ, सूर्य, चन्द्रमा, कामदेव एवं अन्य देवता प्रकट हुए हैं और जिनकी नाभि से अन्तरिक्ष का आविर्भाव हुआ है, उन्हीं आप भगवान् शम्भु को मेरा नमस्कार है।

त्वं परः परमात्मा च त्वं विद्या विविधा हरः।
सद्ब्रह्म च परं ब्रह्म विचारणपरायणः॥

प्रभो! आप ही सबसे उत्कृष्ट परमात्मा हैं, आप ही नाना प्रकार की विद्याएँ हैं, आप ही हर (संहारकर्ता) हैं, आप ही सद्ब्रह्म तथा परब्रह्म हैं, आप सदा विचार में तत्पर रहते हैं।

यस्य नादिर्न मध्यं च नान्तमस्ति जगद्यतः।
कथं स्तोष्यामि तं देवमवाङ्मनसगोचरम्॥

जिनका न आदि है, न मध्य है और न अन्त ही है, जिनसे सारा जगत् उत्पन्न हुआ है तथा जो मन और वाणी के विषय नहीं हैं, उन महादेवजी की स्तुति मैं कैसे कर सकूँगी?

यस्य ब्रह्मादयो देवा मुनयश्च तपोधनाः।
न विपृण्वन्ति रूपाणि वर्णनीयः कथं स मे॥

ब्रह्मा आदि देवता तथा तपस्या के धनी मुनि भी जिनके रूपों का वर्णन नहीं कर सकते, उन्हीं परमेश्वर का वर्णन अथवा स्तवन मैं कैसे कर सकती हूँ?

स्त्रिया मया ते किं ज्ञेया निर्गुणस्य गुणाः प्रभो।
नैव जानन्ति यद्रूपं सेन्द्रा अपि सुरासुराः॥

प्रभो! आप निर्गुण हैं, मैं मूढ़ स्त्री आपके गुणों को कैसे जान सकती हूँ। आपका रूप तो ऐसा है, जिसे इन्द्र सहित सम्पूर्ण देवता

और असुर भी नहीं जान सकते हैं।

नमस्तुभ्यं महेशान नमस्तुभ्यं तपोमय।
प्रसीद शम्भो देवेश भूयो भूयो नमोऽस्तु ते॥

महेश्वर! आपको नमस्कार है। तपोमय! आपको नमस्कार है। देवेश्वर शम्भो! मुझ पर प्रसन्न होइए। आपको बारंबार मेरा नमस्कार है।

[शिवपुराण रु० सं० स० खं० ६/१२-२६

ब्रह्मर्षि उपमन्यु द्वारा स्तुति

[कथा है कि सत्ययुग में एक महान् ऋषि हुए थे, जिनका नाम व्याघ्रपाद था। महान् विद्वान् थे वे। उपमन्यु उन्हीं ऋषि का पुत्र था। इसके छोटे भाई का नाम धौम्य था। यह दोनों भाई पिता की ही भाँति मेधावी, तपस्वी और ब्रह्मवेत्ता थे। माता-पिता दरिद्र थे। दोनों बालकों को एक दिन माता ने पानी में आटा घोलकर पीने को दिया। एक दिन पहले गाय का दूध किसी यजमान के घर में उपमन्यु ने पिया था। कहाँ वह दूध और कहाँ यह पानी में घुला हुआ आटा। उपमन्यु गो-दूध पीने को मचल गया। माता बोली—बेटा, हम वनवासियों के भाग्य में गाय का दूध कहाँ ? कन्द, मूल आदि जो यहाँ मिल जाता है उसीमें हम निर्वाह करते हैं। भगवान् शंकर को प्रसन्न किये बिना दूध-भात तुम्हें कहाँ मिल सकता है बेटा !

अम्बा परम शिव-भक्त थी। उसने बालक उपमन्यु को शिव के आराधन का उपदेश दिया।

उपमन्यु माता का उपदेश लेकर भगवान् शिव की आराधना करने लगा। आशुतोष शंकर की कृपा से उसे पाशुपत-तत्त्व का ज्ञान प्रत्यक्ष हो गया। वैदिक ऋषियों में उपमन्यु का नाम आया है। कहते

हैं कि गोत्र इसी ऋषि ने चलाया था।

वासुदेव श्रीकृष्ण को पाशुपत-ज्ञान का उपदेश महर्षि उपमन्यु ने ही दिया था। इसका उल्लेख शिव-पुराण के अन्तर्गत वायवीय-संहिता में तथा महाभारत के अन्तर्गत अनुशासन पर्व में हम पाते हैं।]

नमो देवाधिदेवाय महादेवाय ते नमः ॥१॥

प्रभो! आप देवताओं के भी अधिदेवता हैं। आपको नमस्कार है। आप ही महान् देवता हैं, आपको नमस्कार है।

शक्ररूपाय शक्राय शक्रवेषधराय च।
नमस्ते वज्रहस्ताय पिंगलायारुणाय च ॥२॥

इन्द्र आपके ही रूप हैं। आप ही साक्षात् इन्द्र हैं तथा आप इन्द्र का-सा वेश धारण करनेवाले हैं। इन्द्र के रूप में आप ही अपने हाथ में वज्र लिये रहते हैं। आपका वर्ण पिंगल और अरुण है, आपको नमस्कार है।

पिनाकपाणये नित्यं शंखशूलधराय च।
नमस्ते कृष्णवासाय कृष्णकुंचितमूर्धजे ॥३॥

आपके हाथ में पिनाक शोभा पाता है। आप सदा शंख और त्रिशूल धारण करते हैं। आपके वस्त्र काले हैं तथा आप मस्तक पर काले घुँघराले केश धारण करते हैं, आपको नमस्कार है।

कृष्णाजिनोत्तरीयाय कृष्णाष्टमिरताय च।
शुक्लवर्णाय शुक्लाय शुक्लाम्बरधराय च ॥४॥

काला मृगचर्म आपका दुपट्टा है। आप श्रीकृष्णाष्टमीव्रत में तत्पर रहते हैं। आपका वर्ण शुक्ल है। आप स्वरूप से भी शुक्ल (शुद्ध) हैं तथा आप श्वेत वस्त्र धारण करते हैं। आपको नमस्कार है।

शुक्लभस्मावलिप्ताय शुक्लकर्मरताय च।
नमोऽस्तु रक्तवर्णाय रक्ताम्बरधराय च ॥५॥

आप अपने सारे अंगों में श्वेत भस्म लपेटे रहते हैं। विशुद्ध कर्म में अनुरक्त हैं। कभी-कभी आप रक्त वर्ण के हो जाते हैं और लाल

वस्त्र ही धारण कर लेते हैं। आपको नमस्कार है।

रक्तध्वजपताकाय रक्तस्रगनुलेपिने।
नमोऽस्तु पीतवर्णाय पीताम्बरधराय च ॥६॥

रक्ताम्बरधारी होने पर आप अपनी ध्वजा-पताका भी लाल ही रखते हैं। लाल फूलों की माला पहनकर अपने श्रीअंगों में लाल चन्दन का ही लेप लगाते हैं। किसी समय आपकी अंगकान्ति पीले रंग की हो जाती है। ऐसे समय में आप पीताम्बर धारण करते हैं। आपको नमस्कार है।

नमोऽस्तूच्छ्रितच्छत्राय किरीटवरधारिणे।
अर्धहारार्धकेयूर अर्धकुण्डलकर्णिने ॥७॥

आपके मस्तक पर ऊँचा छत्र तना है। आप सुन्दर किरीट धारण करते हैं। अर्द्धनारीश्वर रूप में आपके आधे अंग में ही हार, आधे में ही केयूर और आधे अंग के ही कान में कुण्डल शोभा पाता है। आपको नमस्कार है।

नमः पवनवेगाय नमो देवाय वै नमः।
सुरेन्द्राय मुनीन्द्राय महेन्द्राय नमोऽस्तु ते ॥८॥

आप वायु के समान वेगशाली हैं। आपको नमस्कार है। आप ही मेरे आराध्यदेव हैं। आपको बारंबार नमस्कार है। आप ही सुरेन्द्र, मुनीन्द्र और महेन्द्र हैं। आपको नमस्कार है।

नमः पद्मार्धमालाय उत्पलैर्मिश्रिताय च।
अर्धचन्दनलिप्ताय अर्धस्रगनुलेपिने ॥९॥

आप अपने आधे अंग को कमलों की माला से अलंकृत करते हैं और आधे में उत्पलों से विभूषित होते हैं। आधे अंग में चन्दन का लेप लगाते हैं तो आधे शरीर में फूलों का गजरा और सुगन्धित अंगराग धारण करते हैं। ऐसे अर्द्धनारीश्वर रूप में आपको नमस्कार है।

नमः आदित्यवक्त्राय आदित्यनयनाय च।
नमः आदित्यवर्णाय आदित्यप्रतिमाय च ॥१०॥

आपके मुख सूर्य के समान तेजस्वी हैं। सूर्य आपके नेत्र हैं।

आपकी अंगकान्ति भी सूर्य के ही समान है तथा आप अधिक सादृश्य के कारण सूर्य की प्रतिमा-से जान पड़ते हैं।

नमः सोमाय सौम्याय सौम्यवक्त्रधराय च।
सौम्यरूपाय मुख्याय सौम्यदंष्ट्राविभूषिणे ॥११॥

आप सोमस्वरूप हैं। आपकी आकृति बड़ी सौम्य है। आप सौम्य मुख धारण करते हैं। आपका रूप भी सौम्य है। आप प्रमुख देवता हैं और सौम्य दन्तावली से विभूषित होते हैं। आपको नमस्कार है।

नमः श्यामाय गौराय अर्धपीतार्धपाण्डवे।
नारीनरशरीराय स्त्रीपुंसाय नमोऽस्तु ते ॥१२॥

आप हरिहररूप होने के कारण आधे शरीर से साँवले और आधे से गोरे हैं। आधे शरीर में पीताम्बर धारण करते हैं और आधे में श्वेत वस्त्र पहनते हैं। आपको नमस्कार है। आपके आधे शरीर में नारी के अवयव हैं और आधे में नर के। आप स्त्री-पुरषरूप हैं। आपको नमस्कार है।

नमो वृषभवाहाय गजेन्द्रगमनाय च।
दुर्गमाय नमस्तुभ्यमगम्यगमनाय च ॥१३॥

आप कभी बैल पर सवार होते हैं और कभी गजराज की पीठ पर बैठकर यात्रा करते हैं। आप दुर्गम हैं। आपको नमस्कार है। जो दूसरों के लिए अगम्य है, वहाँ भी आपकी गति है। आपको नमस्कार है।

नमोऽस्तु गणगीताय गणवृन्दरताय च।
गणानुयातमार्गाय गणनित्यव्रताय च ॥१४॥

प्रमथगण आपकी महिमा का गान करते हैं। आप अपने पार्षदों की मण्डली में रत रहते हैं। आपके प्रत्येक मार्ग पर प्रमथगण आपके पीछे-पीछे चलते हैं। आपकी सेवा ही गणों का नित्य-व्रत है। आपको नमस्कार है।

नमः श्वेताभ्रवर्णाय संध्यारागप्रभाय च।
अनुद्दिष्टाभिधानाय स्वरूपाय नमोऽस्तु ते ॥१५॥

आपकी कान्ति श्वेत बादलों के समान है। आपकी प्रभा संध्या-कालीन अरुणराग के समान है। आपका कोई निश्चित नाम नहीं है। आप सदा स्वरूप में ही स्थित रहते हैं। आपको नमस्कार है।

नमो रक्ताग्रवासाय रक्तसूत्रधराय च।
रक्तमालाविचित्राय रक्ताम्बरधराय च ॥१६॥

आपका सुन्दर वस्त्र लाल रंग का है। आप लाल सूत्र धारण करते हैं। लाल रंग की माला से आपकी विचित्र शोभा होती है। आप रक्त वस्त्रधारी रुद्रदेव को नमस्कार है।

मणिभूषितमूर्धाय नमश्चन्द्रार्धभूषिणे।
विचित्रमणिमूर्धाय कुसुमाष्टधराय च ॥१७॥

आपका मस्तक दिव्य मणि से विभूषित है। आप अपने ललाट में अर्द्धचन्द्र का आभूषण धारण करते हैं। आपका सिर विचित्र मणि की प्रभा से प्रकाशमान है और आप आठ पुष्प धारण करते हैं।

नमोऽग्निमुखनेत्राय सहस्रशशिलोचने।
अग्निरूपाय कान्ताय नमोऽस्तु गहनाय च ॥१८॥

आपके मुख और नेत्र में अग्नि का निवास है। आपके नेत्र सहस्रों चन्द्रमाओं के समान प्रकाशित हैं। आप अग्निस्वरूप, कमनीयविग्रह और दुर्गम गहन (वन) रूप हैं। आपको नमस्कार है।

खचराय नमस्तुभ्यं गोचराभिरताय च।
भूचराय भुवनाय अनन्ताय शिवाय च ॥१९॥

चन्द्रमा और सूर्य के रूप में आप आकाशचारी देवता को नमस्कार है। जहाँ गौएँ चरती हैं, उस स्थान से आप विशेष प्रेम रखते हैं। आप पृथ्वी पर विचरनेवाले और त्रिभुवनरूप हैं। अनन्त एवं शिवस्वरूप हैं। आपको नमस्कार है।

नमो दिग्वाससे नित्यमधिवाससुवाससे।
नमो जगन्निवासाय प्रतिपत्तिसुखाय च ॥२०॥

आप दिगम्बर हैं। आपको नमस्कार है। आप सबके आवास-स्थान और सुन्दर वस्त्र धारण करनेवाले हैं। सम्पूर्ण जगत् आप में

ही निवास करता है। आपको सम्पूर्ण सिद्धियों का सुख सुलभ है। आपको नमस्कार है।

नित्यमुद्बद्धमुकुटे महाकेयूरधारिणे।
सर्पकण्ठोपहाराय विचित्राभरणाय च ॥२१॥

आप मस्तक पर सदा मुकुट बाँधे रहते हैं। भुजाओं में विशाल केयूर धारण करते हैं। आपके कण्ठ में सर्पों का हार शोभा पाता है तथा आप विचित्र आभूषणों से विभूषित होते हैं। आपको नमस्कार है।

नमस्त्रिनेत्रनेत्राय सहस्रशतलोचने।
स्त्रीपुंसाय नपुंसाय नमः सांख्याय योगिने ॥२२॥

सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि—ये तीन नेत्ररूप होकर आपको त्रिनेत्र-धारी बना देते हैं। आपके लाखों नेत्र हैं। आप स्त्री हैं, पुरुष हैं और नपुंसक हैं। आप ही सांख्यवेत्ता और योगी हैं। आपको नमस्कार है।

शंयोरभिस्रवन्ताय अथर्वाय नमो नमः।
नमः सर्वार्तिनाशाय नमः शोकहराय च ॥२३॥

आप यज्ञपूरक 'शंयु' नामक देवता के प्रसादरूप हैं और अथर्ववेद-स्वरूप हैं। आपको वारंवार नमस्कार है। जो सबकी पीड़ा का नाश करनेवाले और शोकहारी हैं, उन्हें नमस्कार है, नमस्कार है।

नमो मेघनिनादाय बहुमायाधराय च।
बीजक्षेत्राभिपालाय स्रष्ट्राय नमो नमः ॥२४॥

जो मेघ के समान गम्भीर नाद करनेवाले तथा बहुसंख्यक मायाओं के आधार हैं, जो बीज और क्षेत्र का पालन करते हैं और जगत् की सृष्टि करनेवाले हैं, उन भगवान् शिव को वारंवार नमस्कार है।

नमः सुरासुरेशाय विश्वेशाय नमो नमः।
नमः पवनवेगाय नमः पवनरूपिणे ॥२५॥

आप देवताओं और असुरों के स्वामी हैं। आपको नमस्कार है। आप सम्पूर्ण विश्व के ईश्वर हैं। आपको वारंवार नमस्कार है। आप वायु के समान वेगशाली तथा वायुरूप हैं। आपको नमस्कार है, नमस्कार है।

नमः कांचनमालाय गिरिमालाय वै नमः।
नमः सुरारिमालाय चण्डवेगाय वै नमः ॥२६॥

आप सुवर्णमालाधारी तथा पर्वत मालाओं में विहार करनेवाले हैं। देवशत्रुओं के मुण्डों की माला धारण करनेवाले प्रचंड वेगशाली आपको नमस्कार है, नमस्कार है।

ब्रह्मशिरोपहर्ताय महिषघ्नाय वै नमः।
नमः स्त्रीरूपधाराय यज्ञविध्वंसनाय च ॥२७॥

ब्रह्माजी के मस्तक का उच्छेद और महिष का विनाश करनेवाले आपको नमस्कार है। आप स्त्रीरूप धारण करनेवाले तथा यज्ञ के विध्वंसक हैं। आपको नमस्कार है।

नमस्त्रिपुरहर्ताय यज्ञविध्वंसनाय च।
नमः कामांगनाशाय कालदण्डधराय च ॥२८॥

असुरों के तीनों पुरों का विनाश और दक्ष-यज्ञ का विध्वंस करनेवाले आपको नमस्कार है। काम के शरीर का नाश तथा कालदंड को धारण करनेवाले आपको नमस्कार है।

नमः स्कन्दविशाखाय ब्रह्मदण्डाय वै नमः।
नमो भवाय शर्वाय विश्वरूपाय वै नमः ॥२९॥

स्कन्द और विशाखरूप आपको नमस्कार है। ब्रह्मदण्डस्वरूप आपको नमस्कार है। भव (उत्पादक) और शर्व (संहारक) रूप आपको नमस्कार है। विश्वरूपधारी प्रभु को नमस्कार है।

ईशानाय भवघ्नाय नमोऽस्त्वन्धकघातिने।
नमो विश्वाय मायाय चिन्त्याचिन्त्याय वै नमः ॥३०॥

आप सबके ईश्वर, संसार-बन्धन का नाश करनेवाले तथा अंधकासुर के घातक हैं। आपको नमस्कार है। आप सम्पूर्ण माया-स्वरूप तथा चिन्त्य और अचिन्त्य रूप हैं। आपको नमस्कार है।

त्वं नो गतिश्च श्रेष्ठश्च त्वमेव हृदयं तथा।
त्वं ब्रह्मा सर्वदेवानां रुद्राणां नीललोहितः ॥३१॥

आप ही हमारी गति हैं, श्रेष्ठ हैं और आप ही हमारे हृदय हैं।

आप सम्पूर्ण देवताओं में ब्रह्मा तथा रुद्रों में नीललोहित हैं।

आत्मा च सर्वभूतानां सांख्ये पुरुष उच्यते।
ऋषभस्त्वं पवित्राणां योगिनां निष्कलः शिवः ॥३२॥

आप समस्त प्राणियों में आत्मा और सांख्यशास्त्र में पुरुष कहलाते हैं। आप पवित्रों में ऋषभ तथा योगियों में निष्कल शिवरूप हैं।

गृहस्थस्त्वमाश्रमिणामीश्वराणां महेश्वरः।
कुबेरः सर्वयक्षाणां क्रतूनां विष्णुरुच्यते ।३३॥

आप आश्रमियों में गृहस्थ, ईश्वरों में महेश्वर, सम्पूर्ण यक्षों में कुबेर तथा यज्ञों में विष्णु कहलाते हैं।

पर्वतानां भवान् मेरुर्नक्षत्राणां च चन्द्रमाः।
वसिष्ठस्त्वमृषीणां च ग्रहाणां सूर्य उच्यते ॥३४॥

पर्वतों में आप मेरु हैं। नक्षत्रों में चन्द्रमा हैं। ऋषियों में वसिष्ठ हैं तथा ग्रहों में सूर्य कहलाते हैं।

आरण्यानां पशूनां च सिंहस्त्वं परमेश्वरः।
ग्राम्याणां गोवृषश्चासि भवाँल्लोकप्रपूजितः ॥३५॥

आप जंगली पशुओं में सिंह हैं। आप ही परमेश्वर हैं। ग्रामीण पशुओं में आप ही लोकसम्मानित साँड़ हैं।

आदित्यानां भवान् विष्णुर्वसूनां चैव पावकः।
पक्षिणां वैनतेयस्त्वमनन्तो भुजगेषु च ॥३६॥

आप ही आदित्यों में विष्णु हैं। वसुओं में अग्नि हैं। पक्षियों में आप विनतानन्दन गरुड और सर्पों में अनन्त (शेषनाग) हैं।

सामवेदश्च वेदानां यजुषां शतरुद्रियम्।
सनत्कुमारो योगानां सांख्यानां कपिलो ह्यसि ॥३७॥

आप वेदों में सामवेद, यजुर्वेद के मन्त्रों में शतरुद्रिय, योगियों में सनत्कुमार और सांख्यवेत्ताओं में कपिल हैं।

शक्रोऽसि मरुतां देव पितृणां हव्यवाडसि।
ब्रह्मलोकश्च लोकानां गतीनां मोक्ष उच्यसे ॥३८॥

देव! आप मरुद्गणों में इन्द्र, पितरों में हव्यवाहन अग्नि,

लोकों में ब्रह्मलोक और गतियों में मोक्ष कहलाते हैं।

क्षीरोदः सागराणां च शैलानां हिमवान् गिरिः।
वर्णानां ब्राह्मणश्चासि विप्राणां दीक्षितोद्विजः॥३९॥

आप समुद्रों में क्षीरसागर, पर्वतों में हिमालय, वर्णों में ब्राह्मण और ब्राह्मणों में भी दीक्षित ब्राह्मण (यज्ञ की दीक्षा लेनेवाले) हैं।

आदिस्त्वमसि लोकानां संहर्ता काल एव च।
यच्चान्यदपि लोके वै सर्वतेजोऽधिकं स्मृतम्।
तत् सर्वं भगवानेव इति मे निश्चिता मतिः॥४०॥

आप ही सम्पूर्ण लोकों के आदि हैं। आप ही संहार करनेवाले काल हैं। संसार में और भी जो-जो वस्तुएँ सर्वथा तेज में बढ़ी-चढ़ी हैं, वे सभी आप भगवान् ही हैं—यह मेरी निश्चित धारणा है।

नमस्ते भगवन् देव नमस्ते भक्तवत्सल।
योगेश्वर नमस्तेऽस्तु नमस्ते विश्वसम्भव॥४१॥

भगवन्! देव! आपको नमस्कार है। भक्तवत्सल! आपको नमस्कार है। योगेश्वर! आपको नमस्कार है। विश्व की उत्पत्ति के कारण! आपको नमस्कार है।

प्रसीद मम भक्तस्य दीनस्य कृपणस्य च।
अनैश्वर्येण युक्तस्य गतिर्भव सनातन॥४२॥

सनातन परमेश्वर! आप मुझ दीन-दुखी भक्त पर प्रसन्न होइए। मैं ऐश्वर्य से रहित हूँ। आप ही मेरे आश्रयदाता हों।

यच्चापराधं कृतवानज्ञात्वा परमेश्वर।
मद्भक्त इति देवेश तत् सर्वं क्षन्तुमर्हसि॥४३॥

परमेश्वर देवेश! मैंने अनजान में जो अपराध किये हों, वह सब यह समझकर क्षमा कीजिये कि यह मेरा अपना ही भक्त है।

मोहितश्चास्मि देवेश त्वया रूपविपर्ययात्।
नाघ्यं ते न मया दत्तं पाद्यं चापि महेश्वर॥४४॥

देवेश्वर! आपने अपना रूप बदलकर मुझे मोह में डाल दिया।

महेश्वर ! इसीलिए न तो मैंने आपको अर्घ्य दिया और न पाद्य ही समर्पित किया।

[म० भा० अनु० प० १४]

(२)

जय जय जगदेकनाथ शम्भो
प्रकृतिमनोहर नित्यचित्स्वभाव।
अतिगतकलुषप्रपंचवाचा-
मपि मनसां पदवीमतीततत्वम् ॥१॥

जगत् के एकमात्र रक्षक ! नित्य चिन्मयस्वभाव ! प्रकृति मनोहर शम्भो ! आपका तत्त्व कलुष-रहित निर्मल वाणी तथा मन से भी परे है। आपकी जय हो, जय हो।

स्वभावनिर्मलाभोग जय सुन्दरचेष्टित।
स्वात्मतुल्यमहाशक्ते जय शुद्धगुणार्णव ॥२॥

आपका विग्रह स्वभावतः निर्मल है, आपकी चेष्टा अत्यन्त सुन्दर है। आपकी जय हो। आपकी महाशक्ति आपके ही सदृश है। आप विशुद्ध कल्याणयुक्त गुणों के सागर हैं। आपकी जय हो।

अनन्तकान्तिसम्पन्न जयासदृशविग्रह।
अतर्क्यमहिमाधार जयानाकुलमंगल ॥३॥

आप अनन्त कान्ति-सम्पन्न हैं। आपके विग्रह की कहीं समानता नहीं। आपकी जय हो। आप अतर्क्य महिमा के आधार हैं और शान्ति व मंगल के घर हैं। आपकी जय हो।

निरंजन निराधार जय निष्कारणोदय।
निरन्तरपरानन्द जय निर्वृतिकारण ॥४॥

निरंजन (निर्मल), आधार रहित तथा विना कारण के प्रकट होनेवाले शिव ! आपकी जय हो। निरन्तर परमानन्दमय ! शान्ति और सुख के कारण ! आपकी जय हो।

जयातिपरमैश्वर्य जयातिकरुणास्पद ।
जय स्वतन्त्रसर्वस्व जयासदृशवैभव ॥५॥

अतिशय उत्कृष्ट ऐश्वर्य से सुशोभित तथा अत्यन्त करुणा के आधार ! आपकी जय हो। प्रभो ! आपका सब कुछ स्वतन्त्र है तथा आपके वैभव की कहीं समता नहीं है। आपकी जय हो, जय हो।

जयावृतमहाविश्व जयानावृत केनचित् ।
जयोत्तर समस्तस्य जयात्यन्तनिरुत्तर ॥६॥

आपने विराट् विश्व को व्याप्त कर रखा है, किन्तु आप किसी से भी व्याप्त नहीं हैं। आपकी जय हो, जय हो। आप सबसे उत्कृष्ट हैं, किन्तु आपसे श्रेष्ठ कोई नहीं है। आपकी जय हो, जय हो।

जयाद्भुत जयाक्षुद्र जयाक्षत जयाव्यय ।
जयामेय जयामाय जयाभव जयामल ॥७॥

आप अद्भुत हैं, जय हो आपकी। आप महान् हैं, आपकी जय हो। आप अक्षत (निर्विकार) हैं, आपकी जय हो। आप अविनाशी हैं, आपकी जय हो। अप्रमेय परमात्मन् ! आपकी जय हो। माया-रहित महेश्वर ! आपकी जय हो। अजन्मा शिव ! आपकी जय हो। निर्मल शंकर ! आपकी जय हो।

महाभुज महासार महागुण महाकथ ।
महाबल महामाय महारस महारथ ॥८॥

महाबाहो ! महासार ! महागुण ! महती कीर्तिकथा से युक्त ! महा-बली ! महामायावी ! महान् रसिक तथा महारथ ! आपकी जय हो।

नमः परमदेवाय नमः परमहेतवे ।
नमः शिवाय शान्ताय नमः शिवतराय ते ॥९॥

आप परम आराध्य को नमस्कार है। आप परम कारण को नमस्कार है। शान्त शिव को नमस्कार है और आप परम कल्याणमय प्रभु को नमस्कार है।

त्वदधीनमिदं कृत्स्नं जगद्धि ससुरासुरम् ।
अतस्त्वद्विहितामाज्ञां क्षमते कोऽतिवर्तितुम् ॥१०॥

देवताओं और असुरों सहित यह सम्पूर्ण जगत् आपके अधीन है अतः आपकी आज्ञा का उल्लंघन करने में कौन समर्थ हो सकता है।

अयं पुनर्जनो नित्य भवदेकसमाश्रयः।
भवानतोऽनुगृह्यास्मै प्रार्थितं सम्प्रयच्छतु ॥११॥

हे सनातन देव ! यह सेवक एकमात्र आपके ही आश्रित है, अतः आप इस पर अनुग्रह करके इसे इसकी प्रार्थित वस्तु प्रदान करें।

जय जगदम्बे

जयाम्बिके जगन्मातर्जय सर्वजगन्मयि।
जयानवधिकैश्वर्ये जयानुपमविग्रहे ॥१॥

अम्बिके ! जगन्मातः ! आपकी जय हो। सर्वजगन्मयी ! आपकी जय हो। असीम ऐश्वर्यशालिनि ! आपकी जय हो। आपके श्रीविग्रह की कहीं उपमा नहीं है, आपकी जय हो।

जय वाङ्मनसातीते जयाचिद्ध्वान्तभंजिके।
जय जन्मजराहीने जय कालोत्तरोत्तरे ॥२॥

मन, वाणी से अतीत शिवे ! आपकी जय हो। अज्ञानान्धकार का भंजन करनेवाली देवि ! आपकी जय हो। जन्म और जरा से रहित उमे ! आपकी जय हो। काल से भी अतिशय उत्कृष्ट शक्ति-वाली दुर्गे ! आपकी जय हो।

जयानेकविधानस्थे जय विश्वेश्वरप्रिये।
जय विश्वसुराराध्ये जय विश्वविजृम्भिणि ॥३॥

अनेक प्रकार के विधानों में स्थित परमेश्वरी ! आपकी जय हो। विश्वनाथ-प्रिये ! आपकी जय हो। समस्त देवताओं की आराधनीया देवि ! आपकी जय हो। सम्पूर्ण विश्व का विस्तार करनेवाली जगदम्बिके ! आपकी जय हो।

जय मंगलदिव्यांगि जय मंगलदीपिके।
जय मंगलचारित्रे जय मंगलदायिनि ॥४॥

मंगलमय दिव्य अंगोंवाली देवि ! आपकी जय हो। मंगल को

प्रकाशित करनेवाली ! आपकी जय हो । मंगलमय चरित्रवाली सर्वमंगले ! आपकी जय हो । मंगलदायिनि ! आपकी जय हो ।

नमः परमकल्याणगुणसंचयमूर्तये ।
त्वत्तः खलु समुत्पन्नं जगत्त्वय्येव लीयते ॥५॥

परम कल्याणमय गुणों की आप मूर्ति हैं, आपको नमस्कार है । सम्पूर्ण जगत् आपसे ही उत्पन्न हुआ है, अतः आप में ही लीन होगा ।

त्वद्विनातः फलं दातुमीश्वरोऽपि न शक्नुयात् ।
जन्मप्रभृति देवेशि जनोऽयं त्वदुपाश्रितः ॥६॥
अतोऽस्य तव भक्तस्य निर्वर्तय मनोरथम् ।

देवेश्वरि ! आपके विना ईश्वर भी फल देने में समर्थ नहीं हो सकते । यह जन जन्मकाल से ही आपकी शरण में आया हुआ है । अतः देवि ! आप अपने इस भक्त का मनोरथ सिद्ध कीजिये ।

[शिव पु० वायवीय संहिता अ० ३१

महात्मा तण्डि द्वारा स्तुति

[कथा है कि सत्युग में तण्डि नामक एक प्रसिद्ध ऋषि थे। शिवजी की आराधना उन्होंने दीर्घकाल तक की थी। तपोनिधि तण्डि ने अपूर्व तपस्या और आराधना से निर्गुण और सगुण भगवान् शिव के इन दोनों रूपों का चिन्तन और दर्शन किया। महात्मा तण्डि ने भगवान् आशुतोष की इस प्रकार स्तुति की थी :]

पवित्राणां पवित्रस्त्वं गतिर्गतिमतां वर।
अत्युग्रं तेजसां तेजस्तपसां परमं तपः॥१॥

सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर ! आप पवित्रों में भी परम पवित्र तथा गतिशील प्राणियों की उत्तम गति हैं। तेजों में अत्यन्त उग्र तेज और तपस्याओं में उत्कृष्ट तप हैं।

विश्वावसुहिरण्याक्षपुरुहूतनमस्कृत ।
भूरिकल्याणद विभो परं सत्यं नमोऽस्तु ते॥२॥

गन्धर्वराज विश्वावसु, दैत्यराज हिरण्याक्ष और देवराज इन्द्र भी आपकी वन्दना करते हैं। सबको महान् कल्याण प्रदान करनेवाले प्रभो ! आप परम सत्य हैं। आपको नमस्कार है।

जातौमरणभीरूणां यतीनां यततां विभो।
निर्वाणद सहस्रांशो नमस्तेऽस्तु सुखाश्रय ॥३॥

विभो ! जो जन्म-मरण से भयभीत हो संसार-बन्धन से मुक्त होने के लिए प्रयत्न करते हैं, उन यतियों को निर्वाण (मोक्ष) प्रदान करनेवाले आप ही हैं। आप ही सहस्रों किरणोंवाले सूर्य होकर तप रहे हैं। सुख के आश्रयरूप महेश्वर ! आपको नमस्कार है।

ब्रह्मा शतक्रतुर्विष्णुर्विश्वेदेवा महर्षयः।
न विदुस्त्वां तु तत्वेन कुतो वेत्स्यामहे वयम्।
त्वत्तः प्रवर्तते सर्वं त्वयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥४॥

ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, विश्वेदेव तथा महर्षि भी आपको यथार्थरूप से नहीं जानते हैं। फिर हम कैसे जान सकते हैं। आपसे ही सबकी उत्पत्ति होती है तथा आप में ही यह सारा जगत् प्रतिष्ठित है।

कालाख्यः पुरुषाख्यश्च ब्रह्माख्यश्च त्वमेव हि।
तनवस्ते स्मृतास्तिस्रः पुराणज्ञै. सुर्षिभिः ॥५॥

काल, पुरुष और ब्रह्म—इन तीन नामों द्वारा आप ही प्रतिपादित होते हैं। पुराणवेत्ता देवर्षियों ने आपके ये तीन रूप बताये हैं।

अधिपौरुषमध्यात्ममधिभूताधिदैवतम् ।
अधिलोकाधिविज्ञानमधियज्ञस्त्वमेव हि ॥६॥

अधिपौरुष, अध्यात्म, अधिभूत, अधिदैवत, अधिलोक, अधि-विज्ञान और अधियज्ञ आप ही हैं।

त्वां विदित्वात्मदेहस्थं दुर्विदं दैवतैरपि।
विद्वांसो यान्ति निर्मुक्ताः परं भावमनामयम् ॥७॥

आप देवताओं के लिए भी दुर्ज्ञेय हैं। विद्वान् पुरुष आपको अपने ही शरीर में स्थित अन्तर्यामी आत्मा के रूप में जानकर संसार-बन्धन से मुक्त हो रोग-शोक से रहित परमभाव को प्राप्त होते हैं।

अनिच्छतस्तव विभो जन्ममृत्युरनेकतः।
द्वारं तु स्वर्गमोक्षाणामाक्षेप्ता त्वं ददासि च ॥८॥

प्रभो ! यदि आप स्वयं ही कृपा करके जीव का उद्धार करना न

चाहें तो उसके बारंबार जन्म और मृत्यु होते रहते हैं। आप ही स्वर्ग और मोक्ष के द्वार हैं। आप ही उनकी प्राप्ति में बाधा डालनेवाले हैं तथा आप ही ये दोनों वस्तुएँ प्रदान करते हैं।

त्वं वै स्वगश्च मोक्षश्च कामः क्रोधस्त्वमेव च।
सत्वं रजस्तमश्चैव अधश्चोर्ध्वं त्वमेव हि ॥९॥

आप ही स्वर्ग और मोक्ष हैं। आप ही काम और क्रोध हैं तथा आप ही सत्व, रज, तम, अधोलोक और ऊर्ध्वलोक हैं।

ब्रह्मा भवश्च विष्णुश्च स्कन्देन्द्रौ सविता यमः।
वरुणेन्दू मनुर्धाता विधाता त्वं धनेश्वरः ॥१०॥

ब्रह्मा, विष्णु, शिव, स्कन्द, इन्द्र, सूर्य, यम, वरुण, चन्द्रमा, मनु, धाता, विधाता और धनाध्यक्ष कुबेर भी आप ही हैं।

भूर्वायुः सलिलाग्निश्च खं वाग्बुद्धिः स्थितिर्मतिः।
कर्म सत्यानृते चोभे त्वमेवास्ति च नास्ति च ॥११॥

पृथ्वी, वायु, जल, अग्नि, आकाश, वाणी, बुद्धि, स्थिति, मति, कर्म, सत्य, असत्य तथा अस्ति और नास्ति भी आप ही हैं।

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थाश्च प्रकृतिभ्यः परं ध्रुवम्।
विश्वाविश्वपरोभावश्चिन्त्याचिन्त्यस्त्वमेव हि ॥१२॥

आप ही इन्द्रियाँ और इन्द्रियों के विषय हैं। आप ही प्रकृति से परे निश्चल एवं अविनाशी तत्त्व हैं। आप ही विश्व और अविश्व—दोनों से परे विलक्षण भाव हैं तथा आप ही चिन्त्य और अचिंत्य हैं।

यच्चैतत् परमं ब्रह्म यच्च तत् परमं पदम्।
या गतिः सांख्ययोगानां स भवान् नात्र संशयः ॥१३॥

जो यह परम ब्रह्म है, जो वह परमपद है तथा जो सांख्यवेत्ताओं और योगियों की गति है, वह आप ही हैं—इसमें संशय नहीं है।

नूनमद्य कृतार्थाः स्म नूनं प्राप्ताः सतां गतिम्।
यां गतिं प्रार्थयन्तीह ज्ञाननिर्मलबुद्धयः ॥१४॥

ज्ञान से निर्मल बुद्धिवाले ज्ञानी पुरुष यहां जिस गति को प्राप्त करना चाहते हैं, सत्पुरुषों की उसी गति को निश्चित रूप से हम प्राप्त

हो गये हैं, अतः आज हम निश्चय ही कृतार्थ हो गये।

अहो मूढाः स्म सुचिरमिमं कालमचेतसा।
यन्न विद्मः परं देवं शाश्वतं यं विदुर्बुधाः ॥१५॥

अहो, हम अज्ञानवश इतने दीर्घकाल तक मोह में पड़े रहे हैं, क्योंकि जिन्हें विद्वान् पुरुष जानते हैं, उन्हीं सनातन परमदेव को हम अब तक नहीं जान सके थे।

सेयमासादिता साक्षात् त्वद्भक्तिर्जन्मभिर्मया।
भक्तानुग्रहकृद् देवो यं ज्ञात्वामृतमश्नुते ॥१६॥

अब अनेक जन्मों के प्रयत्न से मैंने यह साक्षात् आपकी भक्ति प्राप्त की है। आप ही भक्तों पर अनुग्रह करनेवाले महान् देवता हैं, जिन्हें जानकर ज्ञानी पुरुष मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं।

देवासुरमुनीनां तु यच्च गुह्यं सनातनम्।
गुहायां निहितं ब्रह्म दुर्विज्ञेयं मुनेरपि ॥१७॥
स एष भगवान् देवः सर्वकृत् सर्वतोमुखः।
सर्वात्मा सर्वदर्शी च सर्वगः सर्ववेदिता ॥१८॥

जो सनातन ब्रह्म देवताओं, असुरों और मुनियों के लिए भी गुह्य है, जो हृदय गुहा में स्थित रहकर मननशील मुनि के लिए भी दुर्विज्ञेय बने हुए हैं, वही ये भगवान् हैं। ये ही सबकी सृष्टि करनेवाले देवता हैं। इनके सब ओर मुख हैं। ये सर्वात्मा, सर्वदर्शी, सर्वव्यापी और सर्वज्ञ हैं।

देहकृद् देहभृद् देही देहभुग्देहिनां गतिः।
प्राणकृत् प्राणभृत् प्राणी प्राणदः प्राणिनां गतिः ॥१९॥

आप शरीर के निर्माता और शरीरधारी हैं, इसीलिए देही कहलाते हैं। देह के भोक्ता और देहधारियों की परमगति है। आप ही प्राणों के उत्पादक, प्राणधारी, प्राणी, प्राणदाता तथा प्राणियों की गति हैं।

अध्यात्मगतिरिष्टानां ध्यायिनामात्मवेदिनाम्।
अपुनर्भवकामानां या गतिः सोऽयमीश्वरः ॥२०॥

ध्यान करनेवाले प्रिय भक्तों की जो अध्यात्मगति है तथा पुनर्जन्म की इच्छा न रखनेवाले आत्मज्ञानी पुरुषों की जो गति बतायी गयी है, वह ये ईश्वर ही हैं।

अयं च सर्वभूतानां शुभाशुभगतिप्रदः।
अयं च जन्ममरणे विदध्यात् सर्वजन्तुषु ॥२१॥

ये ही समस्त प्राणियों को शुभ और अशुभ गति प्रदान करनेवाले हैं। ये ही समस्त प्राणियों को जन्म और मृत्यु प्रदान करते हैं।

अयं संसिद्धिकामानां या गतिः सोऽयमीश्वरः।
भूराद्यान् सर्वभुवनानुत्पाद्य संदिवौकसः।
दधाति देवस्तनुभिरष्टाभिर्यो बिभर्ति च ॥२२॥

संसिद्धि (मुक्ति) की इच्छा रखनेवाले पुरुषों की जो परम गति है, वह ये ईश्वर ही हैं। देवताओं सहित भू आदि समस्त लोकों को उत्पन्न करके ये महादेव ही (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश, सूर्य, चन्द्र, यजमान—इन) अपनी आठ मूर्तियों द्वारा उनका धारण और पोषण करते हैं।

अतः प्रवर्तते सर्वमस्मिन् सर्वं प्रतिष्ठितम्।
अस्मिंश्च प्रलयं याति अयमेकः सनातनः ॥२३॥

इन्हीं से सबकी उत्पत्ति होती है और इन्हीं में सारा जगत् प्रतिष्ठित है और इन्हीं में सबका लय होता है। ये ही एक सनातन पुरुष हैं।

अयं स सत्यकामानां सत्यलोकः परं सताम्।
अपवर्गश्च मुक्तानां कैवल्यं चात्मवेदिनाम् ॥२४॥

ये ही सत्य की इच्छा रखनेवाले सत्पुरुषों के लिए सर्वोत्तम सत्यलोक हैं। ये ही मुक्त पुरुषों के अपवर्ग (मोक्ष) और आत्मज्ञानियों के कैवल्य हैं।

अयं ब्रह्मादिभिः सिद्धैर्गुह्यायां गोपितः प्रभुः।
देवासुरमनुष्याणामप्रकाशो भवेदिति ॥२५॥

देवता, असुर और मनुष्यों को इनका पता न लगने पाये, मानो

इसीलिए ब्रह्मा आदि सिद्ध पुरुषों ने इन परमेश्वर को अपनी हृदय-गुफा में छिपा रखा है।

तं त्वां देवासुरनरास्तत्त्वेन न विदुर्भवम्।
मोहिताः खल्वनेनैव हृदिस्थेनाप्रकाशिना ॥२६॥

हृदयमन्दिर में गूढ़भाव से रहकर प्रकाशित न होनेवाले इन परमात्मदेव ने सबको अपनी माया से मोहित कर रखा है। इसीलिए देवता, असुर और मनुष्य आप महादेव को यथार्थ रूप से नहीं जान पाते हैं।

ये चैनं प्रतिपद्यन्ते भक्तियोगेन भाविताः।
तेषामेवात्मनाऽऽत्मानं दर्शयत्येष हृच्छयः ॥२७॥

जो लोग भक्तियोग से भावित होकर उन परमेश्वर की शरण लेते हैं, उन्हीं को यह हृदय मन्दिर में शयन करनेवाले भगवान् स्वयं अपना दर्शन देते हैं।

यं ज्ञात्वा न पुनर्जन्म मरणं चापि विद्यते।
यं विदित्वा परं वेद्यं वेदितव्यं न विद्यते ॥२८॥
यं लब्ध्वा परमं लाभं नाधिकं मन्यते बुधः।
यां सूक्ष्मां परमां प्राप्तिं गच्छन्नव्ययमक्षयम् ॥२९॥
यं सांख्या गुणतत्त्वज्ञाः सांख्यशास्त्रविशारदाः।
सूक्ष्मज्ञानतराः सूक्ष्मं ज्ञात्वा मुच्यन्ति बन्धनैः ॥३०॥
यं च वेदविदो वेद्यं वेदान्ते च प्रतिष्ठितम्।
प्राणायामपरा नित्यं यं विशन्ति जपन्ति च ॥३१॥
ओंकाररथमारुह्य ते विशन्ति महेश्वरम्।
अयं स देवयानानामादित्यो द्वारमुच्यते ॥३२॥

जिन्हें जान लेने पर फिर जन्म और मरण का बन्धन नहीं रह जाता है तथा जिनका ज्ञान प्राप्त हो जाने पर फिर दूसरे किसी उत्कृष्ट ज्ञेय तत्त्व का जानना शेष नहीं रहता है।

जिन्हें प्राप्त कर लेने पर विद्वान् पुरुष बड़े-से-बड़े लाभ को भी उनसे अधिक नहीं मानता है, जिस सूक्ष्म परम पदार्थ को पाकर ज्ञानी

मनुष्य ह्रास और नाश से रहित परमपद को प्राप्त कर लेता है।

सत्व आदि तीन गुणों तथा चौबीस तत्त्वों को जाननेवाले सांख्य-ज्ञानविशारद सांख्ययोगी विद्वान् जिस सूक्ष्म तत्त्व को जानकर उस सूक्ष्मज्ञानरूपी नौका के द्वारा संसार समुद्र से पार होते और सब प्रकार के बन्धनों से मुक्त हो जाते हैं।

प्राणायामपरायण पुरुष वेदवेत्ताओं के जानने योग्य तथा वेदान्त में प्रतिष्ठित जिस नित्य तत्त्व का ध्यान और जप करते हैं और उसी में प्रवेश कर जाते हैं, वही ये महेश्वर हैं।

ओंकाररूपी रथ पर आरूढ़ होकर वे सिद्ध पुरुष इन्हीं में प्रवेश करते हैं। ये ही देवयान के द्वार रूप सूर्य कहलाते हैं।

अयं च पितृयानानां चन्द्रमा द्वारमुच्यते।
एष काष्ठा दिशश्चैव संवत्सरयुगादि च ॥३३॥
दिव्यादिव्यः परो लाभ अयने दक्षिणोत्तरे।

ये ही पितृयान-मार्ग के द्वार चन्द्रमा कहलाते हैं। काष्ठा, दिशा, संवत्सर और युग आदि भी ये ही हैं। दिव्य लाभ (देवलोक का सुख), अदिव्य लाभ (इस लोक का सुख), परम लाभ (मोक्ष), उत्तरायण और दक्षिणायन भी ये ही हैं।

एनं प्रजापतिः पूर्वमाराध्य बहुभिः स्तवैः।
प्रजार्थं वरयामास नीललोहितसंज्ञितम् ॥३४॥

पूर्वकाल में प्रजापति ने नाना प्रकार के स्तोत्रों द्वारा इन्हीं नील-लोहित नामवाले भगवान् की आराधना करके प्रजा की सृष्टि के लिए वर प्राप्त किया था।

ऋग्भिर्यमनुशासन्ति तत्वे कर्मणि बह्वृचाः ॥३५॥
यजुर्भिर्यत्त्रिधा वेद्यं जुह्वत्यध्वर्यवोऽध्वरे।
सामभिर्यं च गायन्ति सामगाः शुद्धबुद्धयः ॥३६॥
ऋतं सत्यं परं ब्रह्म स्तुवन्त्याथर्वणा द्विजाः।
यज्ञस्य परमा योनिः पतिश्चायं परः स्मृतः ॥३७॥

ऋग्वेद के विद्वान् तात्विक यज्ञकर्म में ऋग्वेद के मन्त्रों द्वारा

जिनकी महिमा का गान करते हैं।

यजुर्वेद के ज्ञाता द्विज यज्ञ में यजुर्मन्त्रों द्वारा दक्षिणाग्नि, गार्हपत्य और आहवनीय—इन त्रिविध रूपों से जानने योग्य जिन महादेवजी के उद्देश्य से आहुति देते हैं। तथा

शुद्ध बुद्धि से युक्त सामवेद के गानेवाले विद्वान् साममन्त्रों द्वारा जिनकी स्तुति गाते हैं, अथर्ववेदी ब्राह्मण ऋत, सत्य एवं परब्रह्मनाम से जिनकी स्तुति करते हैं, जो यश के परम कारण हैं, वे ही ये परमेश्वर समस्त यज्ञों के परमपति माने गये हैं।

रात्र्यहःश्रोत्रनयनः पक्षमासशिरोभुजः।
ऋतुवीर्यस्तपोधैर्यो ह्यब्दगुह्योरुपादवान् ॥३८॥

रात और दिन इनके काम और नेत्र हैं, पक्ष और मास इनके मस्तक और भुजाएँ हैं, ऋतु वीर्य है, तपस्या धैर्य है तथा वर्ष गुह्य-इन्द्रिय, ऊरु और पैर हैं।

मृत्युर्यमो हुताशश्च कालः संहारवेगवान्।
कालस्य परमा योनिः कालश्चायं सनातनः ॥३९॥

मृत्यु, यम, अग्नि, संहार के लिए वेगशाली काल, काल के परम कारण तथा सनातन काल भी—ये महादेव ही हैं।

चन्द्रादित्यौ सनक्षत्रौ ग्रहाश्च सह वायुना।
ध्रुवः सप्तर्षयश्चैव भुवनाः सप्त एव च ॥४०॥
प्रधानं महदव्यक्तं विशेषान्तं सवैकृतम्।
ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तं भूतादि सदसच्च यत् ॥४१॥
अष्टौ प्रकृतयश्चैव प्रकृतिभ्यश्च यः परः।

चन्द्रमा, सूर्य, नक्षत्र, ग्रह, वायु, ध्रुव, सप्तर्षि, सात भुवन, मूल प्रकृति, महत्तत्त्व, विकारों के सहित विशेषपर्यन्त समस्त तत्त्व, ब्रह्माजी से लेकर कीटपर्यन्त सम्पूर्ण जगत् भूतादि, सत् और असत् आठ प्रकृतियाँ तथा प्रकृति से परे जो पुरुष है, इन सबके रूप में ये महादेवजी ही विराजमान हैं।

अस्य देवस्य यद् भागं कृत्स्नं सम्परिवर्तते ॥४२॥

एतत् परममानन्दं यत् तच्छाश्वतमेव च।
एषा गतिर्विरक्तानामेष भावः परः सताम् ॥४३॥

इन महादेवजी का अंशभूत जो सम्पूर्ण जगत् चक्र की भाँति निरन्तर चलता रहता है, वह भी ये ही हैं। ये परमानन्दस्वरूप हैं। जो शाश्वंत ब्रह्म है, वह भी ये ही हैं। ये ही विरक्तों की गति हैं और ये ही सत्पुरुषों के परमभाव हैं।

एतत् पदमनुद्विग्नमेतद् ब्रह्म सनातनम्।
शास्त्रवेदांगविदुषामेतद् ध्यानं परं पदम् ॥४४॥

ये ही उद्वेगरहित परमपद हैं। ये ही सनातन ब्रह्म हैं। शास्त्रों और वेदांगों के ज्ञाता पुरुषों के लिए ये ही ध्यान करने के योग्य परम-पद हैं।

इयं सा परमा काष्ठा इयं सा परमा कला।
इयं सा परमा सिद्धिरियं सा परमा गतिः ॥४५॥
इयं सा परमा शान्तिरियं सा निर्वृतिः परा।
यं प्राप्य कृतकृत्याः स्म इत्यमन्यन्त योगिनः ॥४६॥

यही वह पराकाष्ठा, यही वह परम कला, यही वह परम सिद्धि और यही वह परम गति हैं एवं यही वह परम शान्ति और वह परम आनन्द भी हैं, जिसको पाकर योगीजन अपने को कृतकृत्य मानते हैं।

इयं तुष्टिरियं सिद्धिरियं श्रुतिरियं स्मृतिः।
अध्यात्मगतिरिष्टानां विदुषां प्राप्तिरव्यया ॥४७॥

यह तुष्टि, यह सिद्धि, यह श्रुति, यह स्मृति, भक्तों की यह अध्यात्मगति तथा ज्ञानी पुरुषों की यह अक्षय प्राप्ति (पुनरावृत्तिरहित मोक्षलाभ) आप ही हैं।

यजतां कामयानानां मखैर्विपुलदक्षिणैः।
या गतिर्यज्ञशीलानां सा गतिस्त्वं न संशयः ॥४८॥

प्रचुर दक्षिणावाले यज्ञों द्वारा सकाम भाव से यजन करने वाले यजमानों की जो गति होती है, वह गति आप ही हैं।

सम्यग् योगजपैः शान्तिर्नियमैर्देहतापनैः।
तप्यतां या गतिर्देव परमा सा गतिर्भवान् ॥४९॥

देव ! उत्तम योग-जप तथा शरीर को सुखा देनेवाले नियमों द्वारा जो शान्ति मिलती है और तपस्या करनेवाले पुरुषों को जो दिव्य गति प्राप्त होती है, वह परम गति आप ही हैं।

कर्मन्यासकृतानां च विरक्तानां ततस्ततः।
या गतिर्ब्रह्मसदने सा गतिस्त्वं सनातन ॥५०॥

सनातन देव ! कर्म-संन्यासियों को और विरक्तों को ब्रह्मलोक में जो उत्तम गति प्राप्त होती है, वह आप ही हैं।

अपुनर्भवकामानां वैराग्ये वर्ततां च या।
प्रकृतीनां लयानां च सा गतिस्त्वं सनातन ॥५१॥

सनातन परमेश्वर ! जो मोक्ष की इच्छा रखकर वैराग्य के मार्ग पर चलते हैं उन्हें, और जो प्रकृति में लय को प्राप्त होते हैं उन्हें, जो गति उपलब्ध होती है, वह आप ही हैं।

ज्ञानविज्ञानयुक्तानां निरुपाख्या निरंजना।
कैवल्या या गतिर्देव परमा सा गतिर्भवान् ॥५२॥

देव ! ज्ञान और विज्ञान से युक्त पुरुषों को जो सारूप्य आदि नाम से रहित, निरंजन एवं कैवल्यरूप परमगति प्राप्त होती है, वह आप ही हैं।

वेदशास्त्रपुराणोक्ताः पंचैता गतयः स्मृताः।
त्वत्प्रसादाद्धि लभ्यन्ते न लभ्यन्तेऽन्यथा विभो ॥५३॥

प्रभो ! वेद-शास्त्र और पुराणों में जो ये पाँच गतियाँ बताई गई हैं, ये आप की कृपा से ही प्राप्त होती हैं अन्यथा नहीं।

असित मुनि द्वारा स्तुति

[असित मुनि का उल्लेख महाभारत के शल्य पर्व में मिलता है। किसी स्थान पर 'असित' नाम आता है और कहीं-कहीं पर 'असित देवल' यह नाम। "असितो देवलो व्यासः" (भगवद्गीता, अ० १०, १३) इस श्लोक में तथा महाभारत (शल्य-पर्व) के अ० ४९; २४ में "असितो देवलश्चैव" ये दो अलग-अलग नाम दिये गये हैं।

ब्रह्मवैवर्त महापुराण के अन्तर्गत श्रीकृष्ण जन्म-खण्ड के अनुसार असित के पिता प्रचेता ऋषि थे। असित मुनि महान् तपस्वी और परम शिवभक्त थे। उन्होंने युधिष्ठिर को उपदेश दिया था।]

जगद्गुरो नमस्तुभ्यं शिवाय शिवदाय च।
योगीन्द्राणां च योगीन्द्र गुरूणां गुरवे नमः ॥१॥
मृत्योर्मृत्युस्वरूपेण मृत्युसंसारखंडन।
मृत्योरीश मृत्युबीज मृत्युंजय नमोऽस्तु ते ॥२॥
कालरूपं फलयतां कालकालेश कारण।
कालादतीत कालस्थ कालकाल नमोऽस्तु ते ॥३॥
गुणातीत गुणाधार गुणबीज गुणात्मक।
गुणीश गुणिनां बीज गुणिनां गुरवे नमः ॥४॥

ब्रह्मस्वरूप ब्रह्मज्ञ ब्रह्मभावे च तत्पर।
ब्रह्मबीजस्वरूपेण ब्रह्मबीज नमोऽस्तु ते ॥५॥

कल्याण प्रदान करनेवाले जगद्गुरु शिव ! तुम्हें नमस्कार है। योगियों के नाथों के भी नाथ तथा गुरुओं के भी गुरु तुम्हें नमस्कार है ॥१॥

हे मृत्यु के मृत्यु, अपने महाकालस्वरूप से मृत्यु रूप संसार को नष्ट करनेवाले, मृत्यु के स्वामी, मृत्यु के बीज (मूल), मृत्यु को जीतनेवाले, तुम्हें नमस्कार है ॥२॥

तुम निर्माण करनेवालों के कालस्वरूप हो। हे काल के काल, ईश्वर, काल से अतीत, काल में स्थित, काल के काल, तुम्हें नमस्कार है ॥३॥

हे गुणों से अतीत, गुणों के आधार, गुणों के मूल, गुणस्वरूप, गुणियों के स्वामी, गुणियों के मूल, गुणियों के गुरु तुम्हें नमस्कार है ॥४॥

हे ब्रह्मस्वरूप, ब्रह्म को जाननेवाले, ब्रह्मावस्था में लीन रहनेवाले, हे ब्रह्म के बीजरूपी अपने रूप से ब्रह्म (रूप जगत्) के मूल, तुम्हें नमस्कार है ॥५॥

हिमालय द्वारा स्तुति

[ब्रह्मवैवर्त महापुराण के अन्तर्गत श्रीकृष्णजन्म-खण्ड के अनुसार हिमालय ने भगवान् शिव के प्रीत्यर्थ यह स्तुति की थी :]

त्वं ब्रह्मा सृष्टिकर्ता च त्वं विष्णुः परिपालकः ।
त्वं शिवः शिवदोऽनन्तः सर्वसंहारकारकः ॥१॥
त्वमीश्वरो गुणातीतो ज्योतीरूपः सनातनः ।
प्रकृतिः प्रकृतीशश्च प्राकृतः प्रकृतेः परः ॥२॥
नानारूपविधाता त्वं भक्तानां ध्यानहेतवे ।
येषु रूपेषु यत्प्रीतिस्तत्तद्रूपं बिभर्षि च ॥३॥
सूर्यस्त्वं सृष्टिजनकः आधारः सर्वतेजसाम् ।
सोमस्त्वं सस्यपाता च सततं शीतरश्मिना ॥४॥
वायुस्त्वं वरुणस्त्वं च विद्वांश्च विदुषां गुरुः ।
मृत्युंजयो मृत्युमृत्युः कालकालो यमांतकः ॥५॥
वेदस्त्वं वेदकर्ता च वेदवेदांगपारगः ।
विदुषां जनकस्त्वं च विद्वांश्च विदुषां गुरुः ॥६॥
मंत्रस्त्वं हि जपस्त्वं हि तपस्त्वं सत्फलप्रदः ।
वाक् त्वं रागाधिदेवी त्वं तत्कर्ता तद्गुरुः स्वयम् ॥७॥

O23:4146
152M1;1

अहो सरस्वती बीजं कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ।।८।।

तुम सृष्टि के कर्ता ब्रह्मा हो, और सृष्टि की रक्षा करनेवाले विष्णु हो, तुम कल्याण देनेवाले, अन्तरहित और सबका संहार करनेवाले शिव हो ।।१।।

तुम गुणों से अतीत, ज्योतिःस्वरूप नित्य ईश्वर हो, तुम सृष्टि के मूल उपादान, उसके स्वामी, उससे उत्पन्न तथा उससे दूर हो ।।२।।

तुम भक्तों के ध्यान के लिए भिन्न-भिन्न रूपों को धारण करते हो। जिन रूपों में जिन (भक्तों) को प्रसन्नता होती है, उस-उस रूप को धारण करते हो ।।३।।

तुम सृष्टि के जनक हो, सब तेजों के आधार सूर्य हो। शीतल रश्मियों से फसलों की रक्षा करनेवाले चन्द्रमा भी तुम हो ।।४।।

तुम वायु हो, वरुण हो, ज्ञानी हो तथा ज्ञानियों के गुरु हो, मौत को जीतनेवाले, मौत की भी मौत, काल के भी काल, यम के अन्तक (यम का भी अन्त करनेवाले) हो ।।५।।

तुम वेद हो, वेदों के कर्ता (ऋषि) हो, वेदों तथा उनके छह अंगों के पारगामी विद्वान् हो। विद्वानों के तुम जनक हो, ज्ञानी हो तथा ज्ञानियों के गुरु हो ।।६।।

तुम मन्त्र हो, तुम जप हो, तुम तप हो, तुम उसका श्रेष्ठ फल देनेवाले हो। तुम वाणी हो, तुम रागों की अधिष्ठात्री देवी (सरस्वती) हो, उनके कर्ता और उपदेष्टा तुम स्वयं हो ।।७।।

अहो! सरस्वती के मूल हो, तुम्हारी स्तुति करने में कौन समर्थ है? ।।८।।

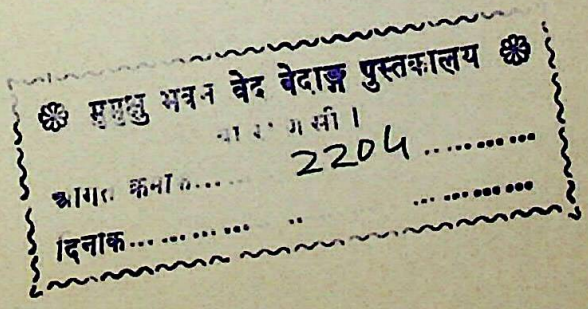

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय
वाराणसी।
2204
आगत क्रमांक
दिनांक

दक्ष द्वारा स्तुति

[प्रजापति दक्ष की आठ कन्याएँ थीं, जिनमें सबसे जेठी सती थी। दक्ष ने यथायोग्य वरों के साथ सबका विवाह कर दिया। शिव के साथ सती का विवाह तो कर दिया, परन्तु अपने जामाता के साथ वह वैर-भाव रखता था। दक्ष ने एक समय एक बड़े यज्ञ का आयोजन किया। उसमें सातों जामाताओं के साथ बेटियों को निमंत्रण देकर बुलाया, परन्तु शिव और सती को निमंत्रण नहीं दिया। सती ने बिना ही निमंत्रण के पिता के घर जाने का हठ किया और वह कुछ शिवगणों के साथ वहाँ पहुँच गयी। देखा कि यज्ञ में सभी देवताओं के भाग रखे हुए हैं, किन्तु पतिदेव शिव का भाग यज्ञ में नहीं था। यह घोर अपमान था। दक्ष ने कहा, "बेटी सती, मेरे ये सब जामाता शिव से कहीं अधिक गुणवान्, महायोगी, धर्मात्मा और प्रशंसनीय हैं। शिव की तुलना में ये सभी श्रेष्ठ हैं। शिव को शत्रु समझकर मैं तुम्हारा आदर नहीं करना चाहता।" यह सुनकर सती क्रोध से काँपने लगी। अपने आपको उसने समाहित किया और आग्नेयी धारणा को धारण कर वायु से प्रेरित अग्नि में अपने-आपको भस्मसात् कर दिया। जो रुद्रगण सती के साथ आये थे, वे यज्ञ का

विध्वंस करने लगे। कालरूप महान् गणों का सेनानी वीरभद्रभी तत्काल वहाँ पहुँचा। उसने यज्ञ को देखते-देखते नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। और दक्ष का सिर काट डाला। हाहाकार मच गया। तब शिव ने आकर देवों और ऋषियों की प्रार्थना सुनकर समाधान किया। बकरे का सिर काटकर दक्ष के रुण्ड में जोड़ दिया गया, और वह भगवान् शिव की स्तुति इस प्रकार करने लगा :]

नमस्ते देवदेवेश नमस्तेऽन्धकसूदन।
देवेन्द्र त्वं बलश्रेष्ठ देवदानवपूजित ॥१॥
मूर्तिमांस्त्वं महामूर्तिः समुद्रः सरसां निधिः।
त्वयि सर्वा देवता हि गावो गोष्ठ इवाऽऽसते ॥२॥
त्वत्तः शरीरे पश्यामि सोममग्निजलेश्वरम्।
आदित्यमथ विष्णुं च ब्रह्माणं सबृहस्पतिम् ॥३॥
क्रिया करणकार्ये च कर्ता कारणमेव च।
असच्च सदसच्चैव तथैव प्रभवाव्य (प्य) यौ ॥४॥
नमो भवाय शर्वाय रुद्राय वरदाय च।
पशूनां पतये चैव नमोऽस्त्वन्धकघातिने ॥५॥
त्रिजटाय त्रिशीर्षाय त्रिशूलवरधारिणे।
त्र्यम्बकाय त्रिनेत्राय त्रिपुरघ्नाय वै नमः ॥६॥
नमोऽस्त्वप्रतिरूपाय विरूपाय शिवाय च।
सूर्याय सूर्यपतये सूर्यध्वजपताकिने ॥७॥
नमः प्रमथनाशाय वृषस्कन्धाय वै नमः।
नमो हिरण्यगर्भाय हिरण्यकवचाय च ॥८॥

हे देवदेवेश ! आपको नमस्कार है। हे अन्धक दैत्य को मारने-वाले ! आपको नमस्कार है। हे देवेन्द्र ! हे बलश्रेष्ठ ! हे देवदानव-पूजित ! आपको नमस्कार है ॥१॥

आप मूर्तिमान्, महामूर्तिमान् तथा सरोवरों की निधि समुद्र हैं। जैसे गायें गोष्ठ (गोठ) में रहती हैं वैसे अखिल देवता आप में रहते हैं ॥२॥

आप ही से शरीर में मैं चन्द्रमा, अग्नि, वरुण, सूर्य, विष्णु, ब्रह्मा और बृहस्पति को देखता हूँ ॥३॥

आप क्रिया, करण, कार्य, कर्ता, कारण, सत्-असत् तथा उत्पत्ति-प्रलय रूप हैं ॥४॥

भव, शर्व, रुद्र तथा वरद को नमस्कार है। पशुपति तथा अन्धक-नाशन को नमस्कार है ॥५॥

तीन जटावाले, तीन शिरवाले, तीन नेत्रवाले त्रिशूलधारी तथा त्रिपुर नामक राक्षस को मारनेवाले शिव को नमस्कार है ॥६॥

अनुपमेय रूपवाले, विरूप, शिव, सूर्य, सूर्यपति एवं सूर्यध्वज की पताकावाले को नमस्कार है ॥७॥

प्रमथनाशन तथा वृषस्कन्ध को नमस्कार है। हे हिरण्यगर्भ, हे हिरण्यकवच, आपको नमस्कार है ॥८॥

नमो बुद्धाय शुद्धाय संविभागप्रियाय च।
पवनाय पतंगाय नमः सांख्यपराय च ॥९॥
नमोऽपारवते नित्यं गिरिवृक्षप्रियाय च।
नमो यज्ञाधिपतये भूताय प्रस्तुताय च ॥१०॥
सहस्रोद्धतशूलाय सहस्रनयनाय च।
नमो बालार्कवर्णाय बालरूपधराय च ॥११॥
नमो बालार्करूपाय कालक्रीडनकाय च।
नमः शुद्धाय बुद्धाय क्षोभणाय क्षयाय च ॥१२॥
सांख्याय सांख्यमुख्याय योगाधिपतये नमः।
नमो रथ्याथिरथ्याय चतुष्पथपथाय च ॥१३॥
कृष्णाजिनोत्तरीयाय व्यालयज्ञोपवीतिने।
ईशान रुद्रसंघात हरिकेश नमोऽस्तु ते ॥१४॥
त्वमेव देवदेवेश भूतग्रामश्चतुर्विधः।
चराचरस्य स्रष्टा त्वं प्रतिहर्ता त्वमेव च ॥१५॥
त्वमेव ब्रह्मा विश्वेश अप्सु ब्रह्म वदन्ति ते।
सर्वस्य परमा योनिः सुधांशो ज्योतिषां निधिः ॥१६॥

गायन्ति त्वां सुरश्रेष्ठाः सामगा ब्रह्मवादिनः।
यजुर्मय ऋङ्मयश्च सामाथर्वयुतस्तथा ॥१७॥
छेत्ता भेत्ता प्रहर्ता च नेता मन्ताऽसि नो मतः।
दशलक्षणसंयुक्तो धर्मोऽर्थः काम एव च ॥१८॥

बुद्ध, शुद्ध, विभागप्रिय, पवन तथा पतंगरूप को नमस्कार है। सांख्यपरायण रूप को नमस्कार है ॥९॥

पाररहित तथा पर्वत-वृक्ष के प्रेमी को नित्य नमस्कार है। हे यज्ञपति, हे भूतरूप, हे प्रस्तुतरूप आपको नमस्कार है ॥१०॥

हजारों उद्धत त्रिशूलवाले तथा सहस्र नेत्रवाले को नमस्कार है। वाल सूर्य के समान वर्ण वाले तथा वालरूप धारी को नमस्कार है ॥११॥

वालार्करूपी तथा काल से खेलनेवाले को नमस्कार है। हे शुद्ध, हे बुद्ध, हे क्षोभरूप आपको नमस्कार है ॥१२॥

सांख्य (सम्यक्ज्ञान) रूप, सांख्यों में प्रधान तथा योग के अधिपति को नमस्कार है। हे रथ्या (गली) रूप, हे गलियों के स्वामी, हे चौराहे रूप आपको नमस्कार है ॥१३॥

कृष्ण मृग-चर्म के उत्तरीयवाले तथा सर्प के यज्ञोपवीतधारी को नमस्कार है। ईशान! रुद्रों के समूह! हरिकेश आपको नमस्कार है ॥१४॥

हे देवदेवेश! चार प्रकार के प्राणी समूह भी आप ही हैं। चराचर के स्रष्टा तथा संहारक आप ही हैं ॥१५॥

हे विश्वेश! आप ही ब्रह्मा हैं। आपही को लोग ब्रह्म कहते हैं। आप सब की उत्कृष्ट योनि तथा ज्योतियों की निधि चन्द्रमा हैं ॥१६॥

साम गाने वाले सुरश्रेष्ठ ब्रह्मवादी आप ही का गान करते हैं। यजुर्वेद, ऋग्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद से युक्त ब्रह्मवादी आपका ही गुणगान करते हैं ॥१७॥

छिन्न-भिन्न करनेवाले, प्रहार करनेवाले और नेता आदि आप ही हैं—यह मेरा मत है। आप दस प्रकार के लक्षणों से युक्त धर्म,

अर्थ और काम हैं ॥१८॥

होत्रं होता च होम्यं च हुतं चैव तथा प्रभुः ।
त्रिसौपर्णस्तथा ब्रह्मन्यजुषां शतरुद्रियम् ॥१९॥
पवित्रं च पवित्राणां मंगलानां च मंगलम् ।
प्राणश्च त्वं रजश्च त्वं तमः सत्वयुतस्तथा ॥२०॥
चन्द्रादित्यौ चक्षुषी ते हृदयं च पितामहः ।
अग्निष्टोमस्तथा देहो धर्मकर्मप्रसाधितः ॥२१॥
न ब्रह्मा न च गोविन्दः पुराणऋषयो न च ।
माहात्म्यं वेदितुं शक्ता याथातथ्येन ते शिवः ॥२२॥
शिवा या मूर्तयः सूक्ष्मास्ते मह्यं यान्तु दर्शनम् ।
ताभिर्मां सर्वतो रक्ष पिता पुत्रमिवौरसम् ॥२३॥
रक्ष मां रक्षणीयोऽहं तवानघ नमोऽस्तु ते ।
भक्तानुकम्पी भगवान्भक्तश्चाहं सदा त्वयि ॥२४॥

आप हवन, होता, होम करने योग्य, हुत तथा प्रभु हैं। ब्रह्मन् ! आप त्रिसौपर्ण (ऋग्वेद के दशम मंडल के तीन विशिष्ट मंत्र), यजुर्वेदियों के शत रुद्र हैं ॥१९॥

आप पवित्रों में पवित्र तथा मंगलों में मंगल हैं। आप प्राण, रजोगुण, तमोगुण तथा सत्वगुण हैं ॥२०॥

सूर्य-चन्द्रमा आपके नेत्र हैं, ब्रह्मा हृदय हैं और अग्निष्टोम धर्म-कर्म से साधित शरीर हैं ॥२१॥

हे शिव ! ब्रह्मा, विष्णु तथा प्राचीन ऋषि कोई भी आपके माहात्म्य को यथार्थतः नहीं जान सकते ॥२२॥

आपकी जो सूक्ष्म शिवमूर्तियाँ हैं, उनका मुझे दर्शन हो। उनसे मेरी सब तरह रक्षा कीजिए जैसे पिता पुत्र की रक्षा करता है ॥२३॥

मेरी रक्षा कीजिए। मैं रक्षा करने योग्य हूँ। हे निष्पाप ! आपको नमस्कार है। भगवान् भक्त के ऊपर कृपा करते हैं। मैं आपका सदा भक्त हूँ ॥२४॥

ये न रोहन्ति देहस्थाः प्राणिनो रोदयन्ति च।
हर्षयन्ति न कृष्यन्ति नमस्तेभ्यस्तु नित्यशः ॥२५॥
ये समुद्रे नदीदुर्गे पर्वतेषु गुहासु च।
वृक्षमूलेषु गोष्ठेषु कान्तारगहनेषु च ॥२६॥
चतुष्पथेषु रथ्यासु चत्वरेषु सभासु च।
हस्त्यश्वरथशालासु जीर्णोद्यानालयेषु च ॥२७॥
येषु पंचसु भूतेषु दिशासु विदिशासु च।
इन्द्रार्कयोर्मध्यगता ये च चन्द्रार्करश्मिषु ॥२८॥
रसातलगता ये च ये च तस्मात्परं गताः।
नमस्तेभ्यो नमस्तेभ्यो नमस्तेभ्यस्तु सर्वशः ॥२९॥
सर्वस्त्वं सर्वगो देवः सर्वभूतपतिर्भवः।
सर्वभूतान्तरात्मा च तेन त्वं न निमन्त्रितः ॥३०॥
त्वमेव चेज्यसे देव यज्ञैर्विविधदक्षिणैः।
त्वमेव कर्ता सर्वस्य तेन त्वं न निमन्त्रितः ॥३१॥
अथवा मायया देव मोहितः सूक्ष्मया तव।
तस्मात्तु कारणाद्वाऽपि त्वं मया न निमन्त्रितः ॥३२॥
प्रसीद मम देवेश त्वमेव शरणं मम।
त्वं गतिस्त्वं प्रतिष्ठा च न चान्योऽस्तीति मे मतिः ॥३३॥

[ब्रह्म पुराण, अध्याय ४० से संकलित

जो देहस्थित होते हुए भी जन्म नहीं लेते, प्राणियों को रुलाते, आनन्दित करते और स्वयं आकृष्ट नहीं होते उनको नित्य नमस्कार है ॥२५॥

जो समुद्रों में, दुस्तर नदियों में, पर्वतों में, गुफाओं में, वृक्षमूलों में, गोष्ठों में, कान्तारों में, वनों में प्राप्त हैं उन्हें नमस्कार है ॥२६॥

जो चतुष्पथों में, गलियों में, चत्वरों में, सभाओं में, हाथी-घोड़े तथा रथ की शालाओं में, जीर्ण उद्यानालयों में प्राप्त हैं उन्हें नमस्कार है ॥२७॥

जो पंचभूतों में, दिशाओं में, विदिशाओं में, सूर्य-चन्द्रमा के मध्य

में, चन्द्र-सूर्य की किरणों में प्राप्त हैं उन्हें नमस्कार है ॥२८॥

जो रसातलों में प्राप्त हैं तथा रसातल से भी आगे गये हुए हैं, उन्हें नमस्कार है ॥२९॥

आप सब हैं, सर्वगत हैं, सब प्राणियों के स्वामी हैं. भव नामवाले हैं और सब प्राणियों के अन्तरात्मा हैं। इस कारण मैंने आपको निमंत्रण नहीं दिया ॥३०॥

हे देव ! विविध दक्षिणा वाले यज्ञों के द्वारा आप ही यज्ञ किये जाते हैं। आप ही सबके कर्ता हैं। इस कारण आपको निमंत्रित नहीं किया ॥३१॥

अथवा, हे देव ! मैं आपकी सूक्ष्म माया से मोहित हो गया था। इस कारण भी मैंने आपको निमंत्रित नहीं किया ॥३२॥

हे देवेश ! प्रसन्न होइए, आप ही मेरे रक्षक हैं, गति हैं तथा प्रतिष्ठा हैं। आपके सिवाय मेरा दूसरा कोई नहीं है—ऐसी मेरी धारणा है ॥३३॥

श्री शंकराचार्य द्वारा स्तुति

[जगद्गुरु शंकराचार्य अद्वैत वेदान्त के महान् प्रवर्तक थे। जन्म इनका केरल प्रदेश में कालटि ग्राम में हुआ था, जिसे आज कालडि कहते हैं। इनके जन्मकाल के सम्बन्ध में अनेक मत हैं। प्रचलित मत के अनुसार ६८६ ई० का काल स्थिर किया गया है।

प्रसिद्ध दार्शनिक गौड़पाद इनके दादागुरु थे। शंकराचार्य का नाम भगवत्पाद था। भगवान् शंकर के यह अवतार माने जाते हैं। ब्रह्मसूत्र पर इनका 'शरीरक भाष्य' अद्वैत वेदान्त के ग्रन्थों में सुप्रसिद्ध है। भगवद्गीता और दस उपनिषदों पर भी इनके अद्वितीय भाष्य हैं।

सारे भारत का शंकराचार्य ने परिभ्रमण किया था, और हिमालय में ज्योतिर्मठ, द्वारका में शारदा-मठ, दक्षिण में शृंगेरी-मठ तथा जगन्नाथपुरी में गोवर्धन-मठ—ये चार मठ स्थापित किये थे।

श्रीशंकराचार्य द्वारा रचित प्रस्थानत्रयी के भाष्यों तथा उपदेश-साहस्री, विवेक चूड़ामणि आदि दार्शनिक ग्रन्थों के अतिरिक्त अनेक स्तोत्रों की रचना की थी, उनमें से यह एक है :]

हे चन्द्रचूड मदनान्तक शूलपाणे
स्थाणो गिरीश गिरिजेश महेश शंभो ।
भूतेश भीतभयसूदन मामनाथं
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥१॥
हे पार्वती हृदयवल्लभ चन्द्रमौले
भूताधिप प्रमथनाथ गिरीशजाप ।
हे वामदेव भव रुद्र पिनाकपाणे
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥२॥
हे नीलकंठ वृषभध्वज पंचवक्त्र
लोकेश शेषवलय प्रमथेश शर्व ।
हे धूर्जटे पशुपते गिरिजापते माम्
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥३॥
हे विश्वनाथ शिव शंकर देवदेव
गंगाधर प्रमथनायक नन्दिकेश ।
बाणेश्वरान्धकरिपो हर लोकनाथ
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥४॥
वाराणसीपुरपते मणिकर्णिकेश
वीरेश दक्षमखकाल विभो गणेश ।
सर्वज्ञ सर्वहृदयैकनिवास नाथ
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥५॥
श्रीमन्महेश्वर कृपामय हे दयालो
हे व्योमकेश शितिकण्ठ गणाधिनाथ ।
भस्मांगराग नृकपालकलापमाल
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥६॥
कैलासशैलविनिवास वृषाकपे हे
मृत्युंजय त्रिनयन त्रिजगन्निवास ।
नारायणप्रिय मदापह शक्तिनाथ
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥७॥

विश्वेश विश्वभवनाशित विश्वरूप
विश्वात्मक त्रिभुवनैकगुणाभिवेश।
हे विश्वबन्धुकरुणामय दीनबन्धो
संसारदुःखगहनाज्जगदीश रक्ष ॥८॥

हे चन्द्रमा को मस्तक पर धारण करनेवाले, हे कामदेव का विनाश करनेवाले, हे हाथ में शूल (त्रिशूल) धारण करनेवाले, हे स्थाणु (विकार-रहित), हे पर्वतों के स्वामी, हे पार्वतीपति, हे महेश्वर, हे शम्भु, हे प्राणियों के प्रभु, हे लोगों के भय को नष्ट करनेवाले, हे संसार के नाथ शिव, संसार के घोर दुःख से मेरी रक्षा करो ॥१॥

हे पार्वती वल्लभ, हे मस्तक पर चन्द्र धारण करनेवाले, हे भूतों के स्वामी, हे प्रमथों (भूतगणों) के स्वामी, हे गिरिराजकुमारी के पति, हे वामदेव, भव, रुद्र, हे हाथ में पिनाक धनुष को धारण करनेवाले शिव ! संसार के गहरे दुःख से मेरी रक्षा करो ॥२॥

हे नीलकंठ, हे वृषभध्वज, हे पंचमुख, हे जगत्पति, हे शेषनाग का कंगन धारण करनेवाले, हे प्रमथों के स्वामी, हे शर्व (जगत् को नष्ट करनेवाले), हे धूर्जटि, पशुपति, गिरिजापति, संसार के घोर दुःख से मेरी रक्षा करो ॥३॥

हे विश्वनाथ, शिव, शंकर, देवों के देव, गंगाधर, प्रमथों के नायक, नन्दी के स्वामी, वाणासुर के नाथ, अन्धकासुर के विनाशक, लोक के नाथ हर, संसार के घोर दुःख से मेरी रक्षा करो ॥४॥

हे वाराणसी नगरी के स्वामी, मणिकर्णिका महाश्मशान के मालिक, वीरभद्र के स्वामी, दक्ष के यज्ञ के विध्वंसक, सर्वसमर्थ, गुणों के स्वामी, सर्वज्ञ, सबके हृदयों में एकमात्र निवास करनेवाले (सबके आत्मा), मेरे स्वामी, संसार के घोर दुःख से मेरी रक्षा करो ॥५॥

हे शोभासम्पन्न महेश्वर, हे कृपामय, हे दयालु, हे आकाशरूपी केशोंवाले, हे नीलकंठ, हे गणों के अधिपति, हे भस्म के अंगराग वाले (शरीर पर राख मलनेवाले), हे मनुष्यों की खोपड़ियों की माला धारण करनेवाले शिव, संसार के घोर दुःख से मेरी रक्षा करो ॥६॥

हे कैलास पर्वत के निवासी, हे वृषाकपि, हे मृत्युंजय, हे त्रिलोचन, हे त्रिलोकी में व्याप्त, हे विष्णु को प्रिय, हे मदन विनाशक, हे शक्ति के पति शिव, संसार के घोर दुःखों से मेरी रक्षा करो ॥७॥

हे विश्वपति, हे समस्त जगत् को विनष्ट करनेवाले, हे विश्वरूप, विश्वात्मक, तीनों लोकों के व गुणों के एकमात्र अधिष्ठान, हे जगत् के (सबके) बन्धु तथा करुणामय, हे दीनों के बन्धु, संसार के घोर दुःख से मेरी रक्षा करो ॥८॥

गौरीविलासभुवनाय महेश्वराय
पंचाननाय शरणागतकल्पकाय।
शर्वाय सर्वजगतमधिपाय तस्मै
दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय ॥९॥

पार्वती की विलासलीलाओं के उत्पत्तिस्थल, हे महेश्वर, पाँच मुखोंवाले, शरण में आये लोगों के लिए कल्पवृक्षरूप, शर्व, सब लोगों के अधिपति, दारिद्र्य दुःख को जला डालनेवाले शिव को मेरा नमस्कार है ॥९॥

[बृहत् स्तोत्ररत्नाकर

पुष्पदन्त द्वारा स्तुति

[कहते हैं पुष्पदन्त गन्धर्वों का राजा था। भगवान् शिव का वह एक प्रिय दास था। किन्तु कोई अपराध हो जाने के कारण भगवान् शिव उस पर रुष्ट हो गये। और वह अपने महान् पद से च्युत हो गया। तब उसने शिव महिम्नस्तोत्र को रचा। और उसका स्तवन करके भगवान् की कृपा से उसने पुनः अपना महान् पद प्राप्त कर लिया :]

महिम्नः पारन्ते परमविदुषो यद्यसदृशी
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्
ममाप्येष स्तोत्रे हर निरपवादः परिकरः ॥१॥

हे हर ! आपकी महिमा का पार जो नहीं जानते वे यदि आपकी स्तुति करें और वह स्तुति अनुचित हो तो फिर ब्रह्मा आदि की भी वाणी आपकी महिमा का वर्णन कर नहीं सकेगी।

आपका गुणगान अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार जो करते हैं उनकी निन्दा नहीं की जानी चाहिए, इसीलिए मैं भी यह शिवमहिम्न-स्तोत्र कहने का प्रयास कर रहा हूँ।

अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयो—
रतद्व्यावृत्या यं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि।
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः
पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः ॥२॥

हे हर! आपकी महिमा तक पहुँचने में न तो वाणी की गति है और न मन की।

वेद भी उस महिमा की पूर्ण व्याख्या नहीं कर सकते और वे चकित होकर 'नेति' 'नेति' कहते हैं, तब कौन उसकी स्तुति कर सकेगा। उसके कैसे-कैसे गुण हैं, कैसे समझा जा सकता है, फिर भी मैं इसलिए स्तुति कर रहा हूँ कि भक्तों पर कृपा करने के लिए आपने जो सगुण रूप धारण किया है उसके चरणों में ऐसा कौन है जिसका मन नहीं लगता और जिसकी वाणी अर्पित नहीं हो जाती।

मधुस्फीता वाचः परममृतं निर्मितवत—
स्तव ब्रह्मन् किं वागपि सुरगुरोर्विस्मयपदम्।
मम त्वेतां वाणी गुणकथनपुण्येन भवतः
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथन बुद्धिर्व्यवसिता ॥३॥

आपने ऐसे शब्दों का अर्थात् वेदों का निर्माण किया है जो अत्यन्त मधुर हैं और अमृतरूप हैं।

देवगुरु ब्रह्मा की भी वाणी क्या आपको विस्मय में डाल सकती है?

आपके गुण—वर्णन के पुण्य से मैं इस (स्तुति रूपी) वाणी को पावन कर रहा हूँ, यही कारण है कि इस ओर अपनी अल्पबुद्धि को मैंने लगाया है।

त्रयी साङ्ख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च।
रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ॥४॥

तीनों वेद, सांख्य, योग, पाशुपत्य (शैव), वैष्णव इस तरह के

विभिन्न प्रस्थान (पद्धतियाँ) हैं।

कोई कहता है कि यह परमोत्तम है, वह हितकारक है—यह विभिन्न रुचियों की विचित्रता है।

कोई मार्ग सीधा है, कोई मार्ग टेढ़ा है। जो भी भक्त जिस मार्ग पर चलेगा उसके लिए एकमात्र गन्तव्य स्थान आप हैं।

जैसे सीधे टेढ़े अनेक मार्गों से जल के निर्झर अन्त में सभी समुद्र में जा पहुँचते हैं।

महोक्षः खट्वांगं परशुरजिनं भस्म फणिनः
कपालं चेतीयत्तव वरद तन्त्रोपकरणम्।
सुरास्तां तामृद्धिं दधति तु भवद्भ्रूप्रणिहितां
न हि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति ॥५॥

नन्दी (बैल), खट्वांग, परशु, मृगचर्म, भस्म, सर्प और कपाल ऐसी-ऐसी वस्तुएँ आपके तन्त्र की सामग्री हैं—ऐसी वस्तुएँ जिनको कोई पूछेगा नहीं।

किन्तु देवता भी आपकी मात्र कृपादृष्टि से ऐसी समृद्धि प्राप्त करते हैं जिसका वर्णन नहीं हो सकता।

प्रभो ! आप आत्माराम हैं, स्वात्मा में ही रमण करते हैं। सांसारिक विषयों की मृगतृष्णा के चक्कर में नहीं पड़ते।

ध्रुवं कश्चित् सर्वं सकलमपरस्त्वद्ध्रुवमिदं
परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये।
समस्तेऽप्येतस्मिन् पुरमथन तैर्विस्मित इव
स्तुवंजिह्रेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता ॥६॥

एक कहता है कि 'सारा नित्य है', दूसरा कहता है 'सारा अनित्य है' और कोई तीसरा कहता है कि 'सारे जगत् में नित्यता और अनित्यता ये दोनों मिले हुए हैं।'

इन भिन्न-भिन्न कथनों से मैं आश्चर्य में तो पड़ गया हूँ पर आपकी स्तुति करने में लज्जित नहीं हो रहा हूँ, वाचाल हूँ न।

अयत्नादापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं
दशास्यो यद् बाहूनभृत रणकण्डूपरवशान्।
शिरः पद्मश्रेणीरचितचरणाम्भोरुहबलेः
स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर विस्फूर्जितमिदम् ॥७॥

हे त्रिपुरहर ! जिस रावण ने अपने दस सिरों को कमल-माला के रूप में आपके चरणारविन्दों पर चढ़ाया उसकी अटल भक्ति के प्रभाव का क्या कहना।

बिना ही प्रयास के रावण के लिए तीनों लोकों में कोई सामना करनेवाला नहीं बचा।

और इसीलिए उसकी बीसों बाहुओं की युद्ध में भिड़ने की खुज-लाहट नहीं मिट पाई।

यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद परमोच्चैरपि सतीं—
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयत्रिभुवनः।
न तच्चित्रं तस्मिन् वरिवसितरि त्वच्चरणयो—
र्न कस्या उन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः ॥८॥

हे वरदायक ! बाणासुर ने तीनों लोकों को अपना दास बना लिया था और इन्द्र के श्रेष्ठ पद को भी नीचा दिखला दिया था।

यह कैसे हो सका ? आश्चर्य नहीं करना चाहिए। आपके चरणों में जो भक्तिपूर्वक नमन करता है उसे ऐसा फल प्राप्त होता ही है। आपके प्रति विनम्रतापूर्वक नमन सभी प्रकार की उन्नति प्रदान करता है।

अकाण्ड - ब्रह्माण्ड - क्षयचकित - देवासुर-कृपा—
विधेयस्यासीद् यस्त्रिनयन विषं संहृतवतः।
स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो
विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभंगव्यसनिनः ॥९॥

हे त्रिलोचन ! देवों और असुरों द्वारा जब समुद्र मंथन किया गया तब उसमें से ऐसा हालाहल निकला जो अकाल में ही ब्रह्माण्ड का विनाश कर सकता था।

उस क्षण देवों और असुरों पर कृपा करके उस विष को कंठ में धारण कर लिया।

आपके कंठ में वह नीला चिह्न भी, हे नीलकंठ, शोभित हो रहा है।

सच है कि त्रिलोक का भय दूर करनेवाले का दूषण भी भूषण में परिणत हो जाता है।

मही पादाघाताद् व्रजति सहसा संशयपदं
पदं विष्णोर्भ्राम्यद्भुजपरिघरुग्णग्रहगणम्।
मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृतजटाताडिततटा
जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता ॥१०॥

हे ईश! आप ताण्डव नृत्य करते तो हैं संसार की रक्षा करने के हेतु से ही, किन्तु आपके पदाघातों से पृथ्वी संकटग्रस्त हो जाती है।

नृत्य में आपकी भुजाएँ जब घूमती हैं तब उनके प्रहारों से नक्षत्रों और ग्रहों से भरा हुआ आकाश भी पीड़ित हो जाता है।

और तब आपकी असंयत बिखरी हुई जटाओं द्वारा प्रताड़ित स्वर्ग लोक की भी बुरी स्थिति हो जाती है।

सही है कि प्रभुता अद्भुत होती है—अनुकूल दिखता है जैसे प्रतिकूल हो।

रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो
रथांगे चन्द्रार्कौ रथचरणपाणिः शर इति।
दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधि–
र्विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्राः प्रभुधियः ॥११॥

जो त्रिपुर दैत्य एक तिनके की तरह बिना ही प्रयास के भस्म हो सकता था, उसे नष्ट करने के लिए आपने यह कैसा आडम्बर रचा था—

पृथ्वी को अपना रथ बनाया, ब्रह्मा को सारथि बनाया, मेरुपर्वत को धनुष, चन्द्र और सूर्य को रथ के पहिये और चक्रधारी विष्णु को अपना बाण बनाया।

वस्तुतः आप प्रभु ऐसे सर्वशक्तिमान् हैं कि जो भी संकल्प करते हैं उसे पूरा कर दिखाते हैं। परन्तु भक्तों को प्रसन्न करने के लिए आपकी वह सारी लीला ही है।

हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदयो-
र्यदेकोने तस्मिन्निजमुदहरन्नेत्रकमलम्।
गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा
त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर जागर्ति जगताम् ॥१२॥

हे त्रिपुरहर! आपका पूजन करते समय भगवान् विष्णु ने सहस्र कमल चढ़ाने का संकल्प किया था किन्तु,

जब एक कमल कम पड़ गया तो उन्होंने अपने नेत्र कमल को ही निकाल कर चढ़ा दिया।

यही अनुपम भक्ति सुदर्शन चक्र बन गई संसार की रक्षा के लिए।

क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता-
मृषीणामार्त्विज्यं शरणद सदस्याः सुरगणाः।
क्रतुभ्रंषस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो
ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः ॥१३॥

यज्ञविधान में महान् कुशल दक्ष प्रजापति जिस यज्ञ में स्वयं यजमान थे, बड़े-बड़े ऋषि उसमें अध्वर्यु थे और ब्रह्मा जैसे देवता उसमें आमन्त्रित थे उस यज्ञ का भी विध्वंस आपने ही करा दिया यद्यपि यज्ञ का फल दिलाने का आपने संकल्प किया था।

इसमें संदेह नहीं कि जो यज्ञ विना श्रद्धा के किये जाते हैं उनमें यजमान का विनाश ही होता है।

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर पिशाचाः सहचरा-
श्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः।
अमंगल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं
तथापि स्मर्तृणां वरद परमं मंगलमसि ॥१४॥

श्मशानों में क्रीड़ा, भूत-पिशाचों के साथ विचरना, शरीर पर

चिताभस्म का लेप, नरमुण्डों की माला धारण करना—ऐसे-ऐसे आपके सारे व्यवहार अमंगल-सूचक भले ही मालूम दें।

किन्तु हे वरद ! जो भक्त आपका स्मरण करते हैं उनके लिए आप परम मंगल रूप ही हैं।

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्संगितदृशः।
यदालोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्ज्यामृतमये
दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान् ॥१५॥

हे प्रभो ! जन-मन को आत्मसंयत करके विधिपूर्वक योगीजन इन्द्रियों को उनके विषयों से हटा लेते हैं और अन्तर्मुख हो जाते हैं तब उनकी समाधि लग जाती है और वे पुलकित हो जाते हैं और नेत्रों में आनन्द-अश्रु भर जाते हैं। अमृत-कुण्ड में डूबकर जिस अनिर्वचनीय आत्मतत्त्व का वे साक्षात्कार करते हैं और जिस अमित आनन्द का अपने हृदय में वे अनुभव करते हैं वह परम तत्त्व आप ही हैं।

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवह-
स्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च।
परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणता बिभ्रतु गिरं
न विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि ॥१६॥

आप सूर्य हैं, आप सोम हैं, आप पवन हैं, आप अग्नि हैं, आप जल हैं, आप आकाश हैं, आप पृथ्वी हैं, आप आत्मा हैं आदि-आदि रूपों का प्रतिपादन आपके विषय में इस प्रकार की वाणी से विद्वद्-जन भले ही करें—

किन्तु हमें इस संसार में किसी ऐसे तत्त्व का ज्ञान नहीं जो आप नहीं हैं।

भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सह महां-
स्तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम्।
अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देवः श्रुतिरपि
प्रियायास्मै धाम्ने प्रविहितनमस्योऽस्मि भवते ॥१७॥

हे देव ! आपके ये आठ नाम हैं—भव, शर्व, रुद्र, पशुपति, उग्र, महादेव, भीम और ईशान। एक-एक नाम की व्याख्या करने का प्रयत्न वेद भी करते हैं।

स्वतः प्रकाश, चिद्रूप, महेश्वर को मैं तो केवल नमन ही अर्पित करता हूँ।

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव दविष्ठाय च नमो
नमः क्षोदिष्ठाय स्मरहर महिष्ठाय च नमः।
नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन यविष्ठाय च नमो
नमः सर्वस्मै ते तदिदमिति सर्वाय च नमः॥१८॥

हे प्रिय देव ! आपको मेरा नमस्कार है। आपको निर्जन वन-विहार प्रिय है। आप अत्यन्त निकट हैं और अत्यन्त दूर हैं।

अति लघु रूप में तथा अति महान् रूप में भी नमस्कार है आपको हे कामान्तक !

अत्यन्त वृद्ध और अत्यन्त युवा रूप में आपको नमस्कार है मेरा हे त्रिलोचन !

नमस्कार है आप सर्व रूप को। यह सारा वही एकात्म रूप है। इस प्रकार एकमात्र ज्ञेय आपको मेरा नमस्कार है।

बहुलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः
प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः।
जनसुखकृते सत्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः।
प्रमहसिपदे निस्त्रैगुण्यै शिवाय नमो नमः॥१९॥

जगत् के उत्पत्ति में रजोगुण प्रधान ब्रह्म रूप में नमस्कार है आपको।

जगत् के संहार में तमोगुण प्रधान रुद्र रूप में नमस्कार है आपको।

विश्व कल्याण के हेतु सत्वगुण प्रधान विष्णु रूप में नमस्कार है आपको।

तथा ज्योतिस्वरूप, स्वप्रकाश त्रिगुणातीत अवस्था प्राप्त कराने-

वाले शिव रूप में नमस्कार है आपको।

कृशपरिणतिचेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं
क्व च तव गुणसीमोल्लंघनी शश्वदृद्धिः।
इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधाद्
वरद चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् ॥२०॥

मैं आश्चर्यचकित-सा हूँ सर्व अभीष्टों के दाता, कि कहाँ तो अनेक क्लेशों के अधीन मेरा यह कृश मन और कहाँ आपकी अमर विभूतियाँ जो अगणित हैं।

फिर भी मुझे आपकी भक्ति ने ही प्रेरित किया कि मैं यह वाक्य-पुष्पोपहार आपके चरणों में अर्पित करूँ।

असितगिरिसमं स्यात्कज्जलं सिन्धुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ॥२१॥

हे प्रभो! स्वयं देवी सरस्वती समुद्र का पात्र बनाकर उसमें कज्जल-पर्वतों की स्याही घोलकर पृथ्वी के असीम पत्र पर कल्पवृक्ष की लेखनी से अनन्त काल तक लिखती रहें, तब भी आपके गुणों का पार नहीं लगेगा।

[शिव महिम्न स्तोत्र से संकलित

शिव-पंचाक्षर स्तुति

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय
भस्मांगरागाय महेश्वराय।
नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय
तस्मै 'न' काराय नमः शिवाय ॥१॥
मन्दाकिनी सलिलचन्दनचर्चिताय
नन्दीश्वर प्रमथनाथमहेश्वराय।
मन्दारपुष्पबहुपुष्पसुपूजिताय
तस्मै 'म'काराय नमः शिवाय ॥२॥
शिवाय गौरीवदनाब्जवृन्द
सूर्याय दक्षाध्वरनाशकाय।
श्रीनीलकण्ठाय वृषध्वजाय
तस्मै 'शि'काराय नमः शिवाय ॥३॥
वसिष्ठकुम्भोद्भवगौतमाय
मुनीन्द्रदेवार्चितशेखराय ।
चन्द्रार्कवैश्वानरलोचनाय
तस्मै 'व' काराय नमः शिवाय ॥४॥

यज्ञस्वरूपाय जटाधराय
पिनाकहस्ताय सनातनाय।
दिव्याय देवाय दिगम्बराय
तस्मै 'य' काराय नमः शिवाय ॥५॥

नागराज को हार के रूप में धारण करनेवाले, तीन नेत्रवाले, अंगों पर भस्म लपेटनेवाले, नित्य, निर्दोष, किसी भी प्रकार के आवरण से रहित, महेश्वर 'न'कारस्वरूप शिव को मेरा नमस्कार ॥१॥

मन्दाकिनी के जल और चन्दन से चर्चित, नन्दिकेश्वर तथा प्रमथों (गणों) के स्वामियों के भी स्वामी, आक फूल एवं दूसरे बहुत-से फूलों से भलीभाँति पूजित 'म'कारस्वरूप शिव को मेरा नमस्कार ॥२॥

शिव (कल्याणकारी), पार्वती के मुखकमल के लिए सूर्य के समान, दक्ष का यज्ञ नष्ट करनेवाले, कण्ठ में सुन्दर नीले चिह्न से युक्त, ध्वजा में वृषभ के चिह्नवाले 'शि'कारस्वरूप शिव को मेरा नमस्कार ॥३॥

वसिष्ठ, अगस्त्य, गौतम आदि मुनीश्वरों व देवों द्वारा पूजित मस्तकवाले, चन्द्र, सूर्य और अग्निरूपी नेत्रोंवाले 'व'कारस्वरूप शिव को मेरा नमस्कार ॥४॥

यक्ष (पूजनीय) स्वरूपवाले, जटाधारी, पिनाक (धनुष) को हाथ में धारण करनेवाले, सदा-सर्वदा विद्यमान, दिव्य, आवरण-रहित, देव 'य'कारस्वरूप शिव को मेरा नमस्कार ॥५॥

द्वादश ज्योतिर्लिंगों की स्तुति

[प्रकृति और पुरुष सृष्टि-रचना करने लगे, तो पुरुष नारायण के नाम से और प्रकृति नारायणी के नाम से प्रसिद्ध हुई। नारायण की नाभि-कमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए तो वे किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर कमलनाल के अन्दर भ्रमण करने लगे। नारायण ने उठकर कहा—"तुमने सृष्टि-रचना के लिए मेरे शरीर से जन्म लिया है।" ब्रह्मा ने क्रुद्ध होकर नारायण से कहा, "तुम हो कौन? तुम्हारा भी कोई एक कर्ता है।" दोनों के बीच बातचीत बढ़ गई और युद्ध होने लगा। नारायण और ब्रह्मा का विवाद दूर करने के लिए कालाग्नि के समान ज्योतिर्लिंग तत्काल प्रकट हुआ, जो सहस्रों अग्नि-ज्वालाओं से व्याप्त था। न तो ज्योतिर्लिंग का क्षय है, न वृद्धि है, और न आदि, मध्य और अन्त है। इसकी कोई उपमा नहीं। यह अव्यक्त है। इसी ज्योतिर्लिंग ने अनेक स्थानों में प्रकट होकर अनेक प्रकार की आख्याएँ प्राप्त की हैं।

[शिव-पुराण]

वैद्यनाथ-माहात्म्य में द्वादश ज्योतिर्लिंगों की निम्नलिखित सूची दी गई है—

१. सौराष्ट्र में सोमनाथ
२. श्रीशैल पर मल्लिकार्जुन
३. उज्जयनी में महाकाल
४. नर्मदा-तट पर ओंकार
५. हिमालय में केदारनाथ
६. डाकिनी में भीमशंकर
७. वाराणसी में विश्वेश्वर
८. गोमती-तीर पर त्र्यम्बक
९. चिताभूमि में वैद्यनाथ
१०. दारुका वन में नागेश
११. सेतुवन्ध में रामेश्वर
१२. इलोरा में घृष्णेश्वर

एक-एक ज्योतिर्लिंग की स्तुति इस प्रकार है—]

सौराष्ट्रदेशे विशदेऽतिरम्ये
ज्योतिर्मयं चन्द्रकलावतंसम् ।
भक्तिप्रदानाय कृपावतीर्णं
तं सोमनाथं शरणं प्रपद्ये ॥१॥
श्रीशैलशृंगे विबुधातिसंगे
तुलाद्रितुंगेऽपि मुदा वसंतम् ।
तमर्जुनं मल्लिकपूर्वमेकं
नमामि संसारसमुद्रसेतुम् ॥२॥
अवंतिकायां विहितावतारं
मुक्तिप्रदानाय च सज्जनानाम् ।
अकालमृत्योः परिरक्षणार्थं
वंदे महाकालमहासुरेशम् ॥३॥

कावेरिकानर्मदयोः पवित्रे
समागमे सज्जनतारणाय।
सदैव मांधातृपुरे वसंतम्
ओंकारमीशं शिवमेकमीडे ॥४॥
पूर्वोत्तरे प्रज्वलिकानिधाने
सदा वसंतं गिरिजासमेतम्।
सुरासुराराधितपाद पद्मं
श्रीवैद्यनाथं तमहं नमामि ॥५॥
याम्ये सदंगे नगरेऽतिरम्ये
विभूषितांगं विविधैश्च भोगैः।
सद्भक्तिमुक्तिप्रदमीशमेकं
श्रीनागनाथं शरणं प्रपद्ये ॥६॥
महाद्रिपार्श्वे च तटे रमंतं
संपूज्यमानं सततं मुनीन्द्रैः।
सुरासुरैर्यक्षमहोरगाद्यैः
केदारमीशं शिवमेकमीडे ॥७॥
सह्याद्रिशीर्षे विमले वसन्तं
गोदावरीनीरपवित्रदेशे ।
यद्दर्शनात् पातकमाशु नाशं
प्रयाति तं त्र्यंबकमीशमीडे ॥८॥
सुताम्रपर्णीजलराशियोगे
निबध्य सेतुं विशिखैरसंख्यैः।
श्रीरामचन्द्रेण समर्पितं तं
रामेश्वराख्यं नियतं नमामि ॥९॥
यं डाकिनीशाकिनिकासमाजे
निषेव्यमाणं पिशिताशनैश्च।
सदैव भीमादिपदप्रसिद्धं
तं शंकरं भक्तहितं नमामि ॥१०॥

सानन्दमानन्दवने वसंतम्
आनन्दकंदं हतपापवृंदम्।
वाराणसीनाथमनाथनाथं
श्रीविश्वनाथं शरणं प्रपद्ये ॥११॥
इलापुरे रम्यविशालकेऽस्मि
न्समुल्लसंतं च जगद्वरेण्यम्।
वन्दे महोदारतरस्वभावं
घृष्णेश्वराख्यं शरणं प्रपद्ये ॥१२॥

अति सुन्दर तथा विशाल सौराष्ट्र देश में भक्ति देने के लिए कृपापूर्वक अवतीर्ण ज्योतिस्वरूप 'सोमनाथ' चन्द्रशेखर की शरण लेता हूँ ॥१॥

देवताओं के अत्यधिक सान्निध्य में श्रीशैल पर्वत पर तुलाद्रि की ऊँची चोटी पर प्रसन्नता से निवास करते हुए, संसाररूप समुद्र को पार करने के लिए सेतु के रूप में विद्यमान 'मल्लिकार्जुन' को नमस्कार करता हूँ ॥२॥

सज्जनों को मुक्ति देने के लिए, अकाल मृत्यु से रक्षा करने के लिए उज्जैन में अवतीर्ण हुए 'महाकाल' महादेव को नमस्कार करता हूँ ॥३॥

सज्जनों के उद्धार के लिए कावेरिका और नर्मदा के पवित्र संगम पर स्थित मान्धातापुर में निवास करनेवाले 'ओंकारेश्वर' शिव की मैं वन्दना करता हूँ ॥४॥

पूर्वोत्तर दिशा में प्रज्वलिका 'परली' के सान्निध्य में सदा गिरिजा सहित निवास करनेवाले देवों तथा दानवों के द्वारा आराधित चरणकमलोंवाले श्री 'वैद्यनाथ' को प्रणाम करता हूँ ॥५॥

दक्षिण दिशा में अति रमणीय दारुका वन में विविध भोगों के द्वारा अलंकृत अंगोंवाले, श्रेष्ठ भक्ति और मुक्ति प्रदान करनेवाले एकमात्र स्वामी श्री 'नागेश्वर' की शरण में उपस्थित हूँ ॥६॥

हिमालय के पार्श्व में तट पर रमण करते हुए, मुनीन्द्रों, देवों,

असुरों, यक्षों और महानागों आदि के द्वारा सदा संपूजित शिव 'केदारनाथ' की वन्दना करता हूँ ॥७॥

गोदावरी के जल से पवित्र निर्मल देश (महाराष्ट्र) में सह्य पर्वत की चोटी पर निवास करते हुए 'त्र्यम्बकेश्वर' की वन्दना करता हूँ जिनके दर्शन से पाप शीघ्र नष्ट हो जाते हैं ॥८॥

श्रेष्ठ ताम्रपर्णी नदी और समुद्र के संगम पर असंख्य बाणों से सेतु बाँधकर श्रीरामचन्द्र के द्वारा स्थापित श्री 'रामेश्वर' शिव को मैं नमस्कार करता हूँ ॥९॥

डाकिनियों और शाकिनियों के समाज में तथा पिशाचों के द्वारा सदा ही सेवित, 'भीमाशंकर' नामक प्रसिद्ध भक्तहितकारी शंकर को मैं प्रणाम करता हूँ ॥१०॥

आनन्दकानन (काशी) में आनन्द से बसनेवाले, आनन्दकन्द, पापसमूह का विनाश करनेवाले, वाराणसी पुरी के स्वामी, अनाथों के नाथ श्री 'विश्वनाथ' की शरण में उपस्थित होता हूँ ॥११॥

रमणीय और विशाल इस इलापुर में सुशोभित जगत् के पूज्य, अत्यन्त उदार 'घृष्णेश्वर' शिव को मैं प्रणाम करता हूँ और उनकी शरण लेता हूँ ॥१२॥

शिव-सहस्रनाम स्तोत्र

स्थिरः स्थाणुः प्रभुर्भीमः प्रवरो वरदो वरः।
सर्वात्मा सर्वविख्यातः सर्वः सर्वकरो भवः ॥१॥

१. **स्थिरः**—नित्य, २. **स्थाणुः**—आधारस्तम्भ, ३. **प्रभुः**—समर्थ, ४. **भीमः**—भयंकर, ५. **प्रवरः**—सर्वश्रेष्ठ, ६. **वरदः**—वर देनेवाले, ७. **वरः**—वरण करने योग्य, ८. **सर्वात्मा**—सबके आत्मा, ९. **सर्वविख्यातः**—सर्वत्र प्रसिद्ध, १० **सर्वः**—सर्वस्वरूप, ११. **सर्वकरः**—सम्पूर्ण के स्रष्टा, १२. **भवः**—उत्पत्ति-स्थान।

जटी चर्मी शिखण्डी च सर्वांगः सर्वभावनः।
हरश्च हरिणाक्षश्च सर्वभूतहरः प्रभुः ॥२॥

१३. **जटी**—जटाधारी, १४. **चर्मी**—व्याघ्रचर्म धारण करनेवाले, १५. **शिखण्डी**—शिखाधारी, १६. **सर्वांग**—सम्पूर्ण अंगों से सम्पन्न, १७. **सर्वभावनः**—सबके उत्पादक, १८. **हरः**—पापहारी, १९. **हरिणाक्षः**—मृग के जैसे विशाल नेत्रोंवाले, २०. **सर्वभूतहरः**—समस्त प्राणियों का संहार करनेवाले, २१. **प्रभुः**—स्वामी।

प्रवृत्तिश्च निवृत्तिश्च नियतः शाश्वतो ध्रुवः।
श्मशानवासी भगवान् खचरो गोचरोऽर्दनः ॥३॥

२२. **प्रवृत्तिः**—प्रवृत्तिमार्ग, २३. **निवृत्तिः**—निवृत्तिमार्ग, २४. **नियतः**—नियमपरायण, २५. **शाश्वतः**—नित्य, २६. **ध्रुवः**—अचल, २७. **श्मशानवासी**—श्मशान में निवास करनेवाले, २८. **भगवान्**—ऐश्वर्य, ज्ञान, यश, श्री, वैराग्य और धर्म से युक्त, २९. **खचरः**—आकाश में विचरनेवाले, ३०. **गोचरः**—पृथ्वी पर विचरनेवाले, ३१. **अर्दनः**—पापियों को दण्ड देनेवाले।

अभिवाद्यो महाकर्मा तपस्वी भूतभावनः।
उन्मत्तवेषप्रच्छन्नः सर्वलोकप्रजापतिः ॥४॥

३२. **अभिवाद्यः**—नमस्कार-योग्य, ३३. **महाकर्मा**—महान् कर्म करनेवाले, ३४. **तपस्वी**—तपस्या में रत, ३५. **भूतभावनः**—आकाश आदि भूतों की सृष्टि करनेवाले, ३६. **उन्मत्तवेषप्रच्छन्नः**—उन्मत्त वेष में छिपे रहनेवाले, ३७. **सर्वलोकप्रजापतिः**—सभी लोकों की प्रजाओं के पालक।

महारूपो महाकायो वृषरूपो महायशाः।
महात्मा सर्वभूतात्मा विश्वरूपो महाहनुः ॥५॥

३८. **महारूपः**—महान् रूपवाले, ३९. **महाकायः**—विराट्रूप, ४०. **वृषरूपः**—धर्मस्वरूप, ४१. **महायशाः**—महान् यशस्वी, ४२. **महात्मा**—महान् आत्मा, ४३. **सर्वभूतात्मा**—सम्पूर्ण प्राणियों के आत्मा, ४४. **विश्वरूपः**—विश्व जिनका रूप है वे, ४५. **महाहनुः**—विशाल ठोढीवाले।

लोकपालोऽन्तर्हितात्मा प्रसादो हयगर्दभिः।
पवित्रं च महांश्चैव नियमो नियमाश्रितः ॥६॥

४६. **लोकपालः**—लोकरक्षक, ४७. **अन्तर्हितात्मा**—अदृश्य स्वरूपवाले, ४८. **प्रसादः**—प्रसन्न, ४९. **हयगर्दभिः**—खच्चरों के रथ पर चलनेवाले, ५०. **पवित्रम्**—शुद्ध, ५१. **महान्**—पूजनीय, ५२. **नियमः**—शौच-संतोष आदि नियमों के पालन से प्राप्त होने-योग्य, ५३. **नियमाश्रितः**—नियमों के आश्रय।

सर्वकर्मा स्वयम्भूत आदिरादिकरो निधिः।
सहस्राक्षो विशालाक्षः सोमो नक्षत्रसाधकः ॥७॥

५४. **सर्वकर्मा**—सारा जगत् जिनका कर्म है, ५५. **स्वयम्भूतः**—नित्यसिद्ध, ५६. **आदिः**—सबसे प्रथम, ५७. **आदिकरः**—आदि पुरुष, ५८. **निधिः**—ऐश्वर्य के भण्डार, ५९. **सहस्राक्षः**—सहस्रों नेत्रवाले, ६०. **विशालाक्षः**—विशाल नेत्रवाले, ६१. **सोमः**—चन्द्रस्वरूप, ६२. **नक्षत्रसाधकः**—नक्षत्रों के साधक।

चन्द्रः सूर्यः शनिः केतुग्रहो ग्रहपतिर्वरः।
अत्रिरत्र्या नमस्कर्त्ता मृगबाणार्पणोऽनघः ॥८॥

६३. **चन्द्रः**—चन्द्रमा की तरह आह्लादकारी, ६४. **सूर्यः**—सबकी उत्पत्ति के हेतु, ६५. **शनिः**, ६६. **केतुः**, ६७. **ग्रहः**—चन्द्र और सूर्य पर ग्रहण लगनेवाला राहु, ६८. **ग्रहपतिः**—ग्रहों के पालक, ६९. **वरः**—वरणीय, ७०. **अत्रिः**—अत्रि ऋषिस्वरूप, ७१. **अत्र्या नमस्कर्त्ता**—अत्रिपत्नी अनुसूया को दुर्वासारूप से नमस्कार करनेवाले, ७२. **मृग-बाणार्पणः**—मृगरूपधारी यज्ञ पर बाण चलानेवाले, ७३ **अनघः**—पापरहित।

महातपा घोरतपा अदीनो दीनसाधकः।
संवत्सरकरो मन्त्रः प्रमाणं परमं तपः॥९॥

७४. **महातपाः**—महान् तपस्वी, ७५. **घोरतपाः**—भयंकर तपस्या करनेवाले, ७६. **अदीनः**—उदार, ७७. **दीनसाधकः**—दीन-दुखियों का मनोरथ पूर्ण करनेवाले, ७८. **संवत्सरकरः**—संवत्सर-निर्माता, ७९. **मन्त्रः**—प्रणव आदि मन्त्ररूप, ८०. **प्रमाणम्**—प्रमाण-स्वरूप, ८१. **परमं तपः**—उत्कृष्ट तपःस्वरूप।

योगी योज्यो महाबीजो महारेता महाबलः।
सुवर्णरेताः सर्वज्ञः सुबीजो बीजवाहनः॥१०॥

८२. **योगी**—योगनिष्ठ, ८३. **योज्यः**—मनोयोग के आश्रय, ८४. **महाबीजः**—महान् कारणरूप, ८५. **महारेताः**—महावीर्यशाली, ८६. **महाबलः**—महान् शक्ति से सम्पन्न, ८७. **सुवर्णरेताः**—अग्निरूप, ८८. **सर्वज्ञः**—सब कुछ जाननेवाले, ८९. **सुबीजः**—उत्तम बीजरूप, ९०. **बीजवाहनः**—जीवों के संस्कार-बीज को वहन करनेवाले।

दशबाहुस्त्वनिमिषो नीलकण्ठ उमापतिः।
विश्वरूपः स्वयं श्रेष्ठो बलवीरोऽबलोगणः॥११॥

९१. **दशबाहुः**—दस भुजाओं से युक्त, ९२. **अनिमिषः**—कभी पलक न गिरानेवाले, ९३. **नीलकण्ठः**—जगत् की रक्षा के लिए विष का पान करके नील चिह्न को कण्ठ में धारण करनेवाले, ९४. **उमा-पतिः**—उमा के पतिदेव, ९५. **विश्वरूपः**—जगत्स्वरूप, ९६. **स्वयं श्रेष्ठः**—स्वतः सिद्ध श्रेष्ठ, ९७. **बलवीरः**—बल द्वारा वीरता प्रकट

करनेवाले, ९८. **अबलोगणः**—निर्बल समुदायरूप।

गणकर्त्ता गणपतिर्दिग्वासाः काम एव च।
मन्त्रवित् परमो मन्त्रः सर्वभावकरो हरः ॥१२॥

९९. **गणकर्त्ता**—अपने पार्षदगणों का संगठन करनेवाले, १००. **गणपतिः**—गणों के स्वामी, १०१. **दिग्वासाः**—दिगम्बर, १०२. **कामः**—कमनीय, १०३. **मन्त्रवित्**—मन्त्रवेत्ता, १०४. **परमो मन्त्रः**—उत्कृष्ट मन्त्ररूप, १०५. **सर्वभावकरः**—समस्त पदार्थों की सृष्टि करनेवाले, १०६. **हरः**—दुःख हरण करनेवाले।

कमण्डलुधरो धन्वी बाणहस्तः कपालवान्।
अशनी शतघ्नी खड्गी पट्टिशी चायुधो महान् ॥१३॥

१०७. **कमण्डलुधरः**—कमण्डलु धारण करनेवाले, १०८. **धन्वी**—धनुष धारण करनेवाले, १०९. **बाणहस्तः**—हाथ में बाण लिये रहनेवाले, ११०. **कपालवान्**—कपालधारी, १११. **अशनी**—वज्र धारण करनेवाले, ११२. **शतघ्नी**—शतघ्नी रखनेवाले, ११३. **खड्गी**—खड्गधारी, ११४. **पट्टिशी**—पट्टिश धारण करनेवाले, ११५. **आयुधी**—अपने सामान्य आयुध त्रिशूल को लिये रहनेवाले, ११६. **महान्**—सर्वश्रेष्ठ।

स्रुवहस्तः सुरूपश्च तेजस्तेजस्करो निधिः।
उष्णीषी च सुवक्त्रश्च उदग्रो विनतस्तथा ॥१४॥

११७. **स्रुवहस्तः**—हाथ में स्रुवा धारण करनेवाले, ११८. **सुरूपः**—सुन्दर रूपवाले, ११९. **तेजः**—तेजस्वी, १२०. **तेजस्करो निधिः**—भक्तों का तेज बढ़ानेवाले निधिरूप, १२१. **उष्णीषी**—सिर पर पगड़ी धारण करनेवाले, १२२. **सुवक्त्रः**—सुन्दर मुखवाले, १२३. **उदग्रः**—ओजस्वी, १२४. **विनतः**—विनयशील।

दीर्घश्च हरिकेशश्च सुतीर्थः कृष्ण एव च।
शृगालरूपः सिद्धार्थो मुण्डः सर्वशुभंकरः ॥१५॥

१२५. **दीर्घः**—ऊँचे कदवाले, १२६. **हरिकेशः**—ब्रह्मा, विष्णु, महेशस्वरूप, १२७. **सुतीर्थः**—उत्तम तीर्थस्वरूप, १२८. **कृष्णः**—

सच्चिदानन्द, १२९. **शृगालरूपः**—सियार का रूप धारण करनेवाले, १३०. **सिद्धार्थः**—जिनके सभी प्रयोजन सिद्ध हैं, १३१. **मुण्डः**—भिक्षु-स्वरूप, १३२. **सर्वशुभंकरः**—सभी प्राणियों का हित करनेवाले।

अजश्च वहुरूपश्च गन्धधारी कपर्द्यपि।
ऊर्ध्वरेता ऊर्ध्वलिंग ऊर्ध्वशायी नमःस्थलः ॥१६॥

१३३. **अजः**—अजन्मा, १३४. **बहुरूपः**—बहुत-से रूप धारण करनेवाले, १३५. **गन्धधारी**—कस्तूरी आदि सुगन्धित पदार्थ धारण करनेवाले, १३६. **कपर्दी**—जटाजूटधारी, १३७. **ऊर्ध्वरेताः**—अखण्डित ब्रह्मचर्यवाले, १३८. **ऊर्ध्वलिंगः**, १३९. **ऊर्ध्वशायी**—आकाश में शयन करनेवाले, १४०. **नमःस्थलः**—आकाश जिनका वासस्थान है।

त्रिजटी चीरवासाश्च रुद्रः सेनापतिर्विभुः।
अहश्चरो नक्तंचरस्तिग्ममन्युः सुवर्चसः ॥१७॥

१४१. **त्रिजटी**—तीन जटा धारण करनेवाले, १४२. **चीर वासाः**—वल्कल वस्त्र पहननेवाले, १४३. **रुद्रः**—दुःख दूर करानेवाले, १४४. **सेनापतिः**—सेनानायक, १४५. **विभुः** सर्वव्यापी, १४६. **अहश्चरः**—दिन में विचरनेवाले, १४७. **नक्तंचरः**—रात में विचरनेवाले, १४८. **तिग्ममन्युः**—तीखे क्रोधवाले, १४९. **सुवर्चस**—सुन्दर तेजवाले।

गजहा दैत्यहा कालो लोकधाता गुणाकरः।
सिंहशार्दूलरूपश्च आर्द्रचर्माम्बरावृतः ॥१८॥

१५०. **गजहा**—गजरूपधारी असुर को मारनेवाले, १५१. **दैत्यहा**—अन्धक आदि दैत्यों का वध करनेवाले, १५२. **कालः**—मृत्यु अथवा समय, १५३. **लोकधाता**—समस्त जगत् का धारण-पोषण करनेवाले, १५४. **गुणाकरः**—सद्गुणों की खान, १५५. **सिंह-शार्दूलरूपः**—सिंह व्याघ्र आदि का रूप धारण करनेवाले, १५६. **आर्द्रचर्माम्बरावृतः**—गजासुर के गीले चर्म को धारण करनेवाले।

कालयोगी महानादः सर्वकामश्चतुष्पथः।
निशाचरः प्रेतचारी भूतचारी महेश्वरः ॥१९॥

१५७. **कालयोगी**—काल को भी योगबल से जीतनेवाले, १५८. **महानादः**—अनाहत ध्वनिरूप, १५९. **सर्वकामः**—सम्पूर्ण कामनाओं से सम्पन्न, १६०. **चतुष्पथः**—जिनकी प्राप्ति के ये चार मार्ग हैं, ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग और अष्टांगयोग, १६१. **निशाचरः**—रात्रि के समय विचरनेवाले, १६२. **प्रेतचारी**—प्रेतों के साथ विचरनेवाले, १६३. **भूतचारी**—भूतों के साथ विचरनेवाले, १६४. **महेश्वरः**।

बहुभूतो बहुधरः स्वर्भानुरमितो गतिः।
नृत्यप्रियो नित्यनर्तो नर्तकः सर्वलालसः ॥२०॥

१६५. **बहुभूतः**—सृष्टिकाल में एक से अनेक होनेवाले, १६६. **बहुधरः**—बहुतों को धारण करनेवाले, १६७. **स्वर्भानुः**, १६८. **अमित**—अनन्त, १६९. **गतिः**—भक्तों और मुक्तात्माओं के प्राप्त होने योग्य, १७०. **नृत्यप्रियः**—तांडव नृत्य जिन्हें प्रिय है, १७१. **नित्यनर्तः**—निरंतर नृत्य करनेवाले, १७२. **नर्तकः**—नाचने-नचानेवाले, १७३. **सर्वलालसः**—सब पर प्रेम रखनेवाले।

घोरो महातपाः पाशो नित्यो गिरिरुहो नभः।
सहस्रहस्तो विजयो व्यवसायो ह्यतन्द्रितः ॥२१॥

१७४. **घोरः**—भयंकर रूपधारी, १७५. **महातपाः**—महान् तप करनेवाले, १७६. **पाशः**—पाश से बाँधनेवाले, १७७. **नित्यः**—विनाशरहित, १७८. **गिरिरुहः**—पर्वत पर आरूढ़—कैलाशवासी, १७९. **नभः**—आकाश के समान असंग, १८०. **सहस्रहस्तः**—हजारों हाथोंवाले, १८१. **विजयः**—विजेता, १८२. **व्यवसायः**—दृढ़ निश्चयी, १८३. **अतन्द्रितः**—आलस्यरहित।

अधर्षणो धर्षणात्मा यज्ञहा कामनाशकः।
दक्षयागापहारी च सुसहो मध्यमस्तथा ॥२२॥

१८४. **अधर्षणः**—अजेय, १८५. **धर्षणात्मा**—भयरूप, १८६. **यज्ञहा**—दक्ष के यज्ञ का विध्वंस करनेवाले, १८७. **कामनाशकः**—कामदेव को नष्ट करनेवाले, १८८. **दक्षयागापहारी**—दक्ष के यज्ञ का अपहरण करनेवाले, १८९. **सुसहः**—अति सहनशील,

१९०. **मध्यमः**—मध्यस्थ।

तेजोऽपहारी वलहामुदितोऽर्थोऽजितोऽवरः।
गम्भीरघोषो गम्भीरो गम्भीरवलवाहनः ॥२३॥

१९१. **तेजोऽपहारी**—दूसरों के तेज को हर लेनेवाले, १९२. **बलहा**—वलनामक दैत्य का वध करनेवाले, १९३. **मुदितः**, १९४. **अर्थः**, १९५. **अजितः**, १९६. **अवरः**—जिनसे श्रेष्ठ दूसरा कोई नहीं है, १९७. **गम्भीरघोषः**, १९८. **गम्भीरः**, १९९. **गम्भीर बलवाहनः**—अगाध वलशाली वृषभ पर सवारी करनेवाले।

न्यग्रोधरूपो न्यग्रोधो वृक्षकर्णस्थितिर्विभुः।
सुतीक्ष्णदशनश्चैव महाकायो महाननः ॥२४॥

२००. **न्यग्रोधरूपः**—वटवृक्षस्वरूप, २०१. **न्यग्रोधः**, २०२. **वृक्षकर्णस्थितिः**—वटवृक्ष के पत्ते पर शयन करनेवाले बालमुकुन्दरूप, २०३ **विभुः**, २०४. **सुतीक्ष्णदशनः**—अत्यन्त तीखे दाँतवाले, २०५. **महाकायः**, २०६. **महाननः**,।

विष्वक्सेनो हरिर्यज्ञः संयुगापीडवाहनः।
तीक्ष्णतापश्च हर्यश्वः सहायः कर्मकालवित् ॥२५॥

२०७. **विष्वक्सेनः**—दैत्यों की सेना को सब ओर भगा देनेवाले, २०८. **हरिः**—आपत्तियों को हर लेनेवाले, २०९. **यज्ञः**, २१०. **संयुगापीडवाहनः**—युद्ध में पीड़ारहित वाहनवाले, २११. **तीक्ष्णतापः**—सूर्य, २१२ **हर्यश्वः**—हरे रंग के घोड़ों से युक्त, २१३. **सहायः**—जीव-मात्र के सखा, २१४. **कर्मकालवित्**—कर्मों के काल को ठीक-ठीक जाननेवाले।

विष्णुप्रसादितो यज्ञः समुद्रो वडवामुखः।
हुताशनसहायश्च प्रशान्तात्मा हुताशनः ॥२६॥

२१५. **विष्णुप्रसादितः**—भगवान् विष्णु द्वारा प्रसन्नचित्त, २१६. **यज्ञः**—विष्णु स्वरूप (यज्ञो वै विष्णुः), २१७. **समुद्रः**, २१८. **वडवामुखः**—वड़वानल रूप, २१९. **हुताशन सहायः**—अग्नि के सखा वायुरूप, २२०. **प्रशान्तात्मा**, २२१. **हुताशनः**।

उग्रतेजा महातेजा जन्यो विजयकालवित् ।
ज्योतिषामयनं सिद्धिः सर्वविग्रह एव च ॥२७॥

२२२. **उग्रतेजाः**—भयंकर तेजवाले, २२३. **महातेजाः**, २२४. **जन्यः**, २२५. **विजयकालवित्**—विजय के समय का ज्ञान रखनेवाले, २२६. **ज्योतिषामयनम्**—ज्योतिषों का स्थान, २२७. **सिद्धिः**, २२८. **सर्वविग्रहः** ।

शिखी मुण्डी जटी ज्वाली मूर्तिजो मूर्द्धगो बली ।
वेणवी पणवी ताली खली कालकटंकटः ॥२८॥

२२९. **शिखी**—शिखाधारी गृहस्थस्वरूप, २३०. **मुण्डी**—शिखा-रहित संन्यासी, २३१. **जटी**—जटाधारी वानप्रस्थ, २३२. **ज्वाली**, २३३. **मूर्तिजः**—शरीररूप से प्रकट होनेवाले, २३४. **मूर्द्धगः**—मूर्द्धा-सहस्रार चक्र में ध्येयरूप से विद्यमान, २३५. **बली**, २३६. **वेणवी**—वंशी बजानेवाले, २३७. **पणवी**—पणव नामक वाद्य बजानेवाले, २३८. **ताली**—ताल देनेवाले, २३९. **खली**—खलिहान के स्वामी, २४०. **कालकटंकटः**—यमराज की माया को दूर करनेवाले ।

नक्षत्रविग्रहमतिर्गुणबुद्धिर्लयोऽगमः ।
प्रजापतिर्विश्वबाहुर्विभागः सर्वगोऽमुखः ॥२९॥

२४१. **नक्षत्रविग्रहमतिः** नक्षत्र-ग्रह आदि की गति को जाननेवाले, २४२. **गुणबुद्धिः**, २४३. **लयः**—प्रलय के स्थान, २४४. **अगमः**, २४५. **प्रजापतिः**, २४६. **विश्वबाहुः**—अनन्त भुजावाले, २४७. **विभागः**—विभागस्वरूप, २४८. **सर्वगः**, २४९. **अमुखः**—बिना मुखवाला ।

विमोचनः सुसरणो हिरण्यकवचोद्भवः ।
मेदजो बलचारी च महीचारी स्रुतस्तथा ॥३०॥

२५०. **विमोचनः**, २५१. **सुसरणः**—श्रेष्ठ आश्रय, २५२. **हिरण्यकवचोद्भवः**—हिरण्यगर्भ की उत्पत्ति का स्थान, २५३. **मेद्रजः**, २५४. **बलचारी**—बल का संचार करनेवाले, २५५. **महीचारी**—सारी पृथ्वी पर विचरनेवाले, २५६. **स्रुतः**—सर्वत्र पहुँचे हुए ।

सर्वतूर्यनिनादी च सर्वातोद्यपरिग्रहः ।
व्यालरूपो गुहावासी गुहो माली तरंगवित् ॥३१॥

२५७. **सर्वतूर्यनिनादी**—सब प्रकार के बाजे बजानेवाले, २५८. **सर्वातोद्यपरिग्रहः**—सम्पूर्ण वाद्यों का संग्रह करनेवाले, २५९. **व्यालरूपः**, २६०. **गुहावासी**—हृदय गुफा में निवास करनेवाले, २६१. **गुहः**—कार्तिकेयस्वरूप, २६२. **माली**, २६३. **तरंगवित्**—क्षुधा-पिपासा आदि ऊर्मियों के ज्ञाता ।

त्रिदशस्त्रिकालधृक् कर्मसर्वबन्धविमोचनः ।
बन्धनस्त्वसुरेन्द्राणां युधि शत्रुविनाशनः ॥३२॥

२६४. **त्रिदशः**—जन्म, स्थिति और विनाश के हेतुभूत, २६५. **त्रिकालधृक्**—भूत, भविष्य और वर्तमान कालों को धारण करनेवाले, २६६. **कर्मसर्वबन्धविमोचनः**, २६७. **असुरेन्द्राणां बन्धनः**—बलि आदि असुरपतियों को बाँध लेनेवाले, २६८. **युधिशत्रुविनाशनः**—युद्ध में शत्रुओं का विनाश करनेवाले ।

सांख्यप्रसादो दुर्वासाः सर्वसाधुनिषेवितः ।
प्रस्कन्दनो विभागज्ञोऽतुल्यो यज्ञविभागवित् ॥३३॥

२६९. **सांख्यप्रसादः**—सांख्यज्ञान से प्रसन्न होनेवाले, २७०. **दुर्वासाः**—रुद्रावतार दुर्वासा मुनि, २७१. **सर्वसाधुनिषेवितः**—साधु-पुरुषों द्वारा सेवित, २७२. **प्रस्कन्दनः**—ब्रह्मादि को भी स्थान भ्रष्ट करनेवाले, २७३. **विभागज्ञः**—कर्म और फलों के विभाग को जाननेवाले, २७४. **अतुल्यः**—तुलनारहित, २७५. **यज्ञविभागवित्**—यज्ञ सम्बन्धी हविष्य के विभिन्न भागों का ज्ञान रखनेवाले ।

सर्ववासः सर्वचारी दुर्वासा वासवोऽमरः ।
हैमो हेमकरोऽयज्ञः सर्वधारी धरोत्तमः ॥३४॥

२७६. **सर्ववासः**—सर्वत्र निवास करनेवाले, २७७. **सर्वचारी**—सर्वत्र विचरनेवाले, २७८ **दुर्वासाः**—वस्त्र से आच्छादित करना दुर्लभ है जिनका, २७९. **वासवः**, २८०. **अमरः**, २८१. **हैमः**—हिम-समूह-हिमालयरूप, २८२. **हेमकरः**, २८३. **अयज्ञ** :—कर्मरहित,

२८४. **सर्वधारी**, २८५. **धरोत्तमः**—धारण करनेवालों में उत्तम।

लोहिताक्षो महाक्षश्च विजयाक्षो विशारदः।
संग्रहो निग्रहः कर्ता सर्पचीरनिवासनः ॥३५॥

२८६. **लोहिताक्षः**—रक्त नेत्र, २८७. **महाक्षः**, २८८. **विजयाक्षः**, २८९. **विशारदः**, २९०. **संग्रहः**, २९१. **निग्रहः**—दण्ड देनेवाले, २९२. **कर्त्ता**, २९३. **सर्पचीरनिवासनः**—सर्पमय चीर धारण करनेवाले।

मुख्योऽमुख्यश्च देहश्च काहलिः सर्वकामदः।
सर्वकालप्रसादश्च सुबलो बलरूपधृक् ॥३६॥
सर्वकामवरश्चैव सर्वदः सर्वतोमुखः।
आकाशनिर्विरूपश्च निपाती ह्यवशः खगः ॥३७॥

२९४. **मुख्यः**—सर्वश्रेष्ठ, २९५. **अमुख्यः**—जिससे मुख्य दूसरा न हो, २९६. **देहः**, २९७. **काहलिः**—काहल नामक वाद्यविशेष को बजानेवाले, २९८. **सर्वकामदः**, २९९. **सर्वकालप्रसादः**—सर्वदा कृपा करनेवाले, ३००. **सुबलः**, ३०१. **बलरूपधृक्**—बल और रूप के आधार, ३०२. **सर्वकामवरः**—सभी कमनीय पदार्थों में श्रेष्ठ, ३०३. **सर्वदः**, ३०४. **सर्वतोमुखः**—सब ओर मुखवाले, ३०५. **आकाशनिर्विरूपः**—आकाश की भाँति जिनसे सब प्रकार के रूप प्रकट होते हैं वे, ३०६. **निपाती**—पापियों को नरक में गिरानेवाले, ३०७. **अवशः**—जिनपर वश नहीं चलता वे, ३०८. **खगः**।

रौद्ररूपोंऽशुरादित्यो बहुरश्मिः सुवर्चसी।
वसुवेगो महावेगो मनोवेगो निशाचरः ॥३८॥

३०९. **रौद्ररूपः**, ३१०. **अंशुः**—किरणस्वरूप, ३११. **आदित्यः**, ३१२. **बहुरश्मिः**—सूर्य, ३१३. **सुवर्चसी**—उत्तम तेज से युक्त, ३१४. **वसुवेगः**—वायु के समान वेगवान्, ३१५. **महावेगः**, ३१६. **मनोवेगः**, ३१७. **निशाचरः**।

सर्ववासी श्रियावासी उपदेशकरोऽकरः।
मुनिरात्मनिरालोकः सम्भग्नश्च सहस्रदः ॥३९॥

३१८. **सर्ववासी**, ३१९. **श्रियावासी**—लक्ष्मी के साथ निवास

करनेवाले, ३२०. **उपदेशकरः**, ३२१. **अकरः**—कर्तृत्व के अभिमान से रहित, ३२२. **मुनिः**, ३२३. **आत्मनिरालोकः**—देह की उपाधि से अलग, ३२४. **सम्भग्नः**—सम्यक् रूप से सेवित, ३२५. **सहस्रदः**।

पक्षी च पक्षरूपश्च अतिदीप्तो विशाम्पतिः।
उन्मादो मदनः कामो ह्यश्वत्थोऽर्थकरो यशः ॥४०॥

३२६. **पक्षी**—गरुडरूपधारी, ३२७. **पक्षरूपः**—शुक्लपक्षस्वरूप, ३२८. **अतिदीप्तः**, ३२९. **विशाम्पतिः**—स्वामी, ३३०. **उन्मादः**—प्रेम में उन्मत्त, ३३१. **मदनः**—कामदेवरूप, ३३२. **कामः**, ३३३. **अश्वत्थः**—संसार-वृक्षरूप, ३३४. **अर्थकरः**, ३३५. **यशः**।

वामदेवश्च वामश्च प्राग् दक्षिणश्च वामनः।
सिद्धयोगी महर्षिश्च सिद्धार्थः सिद्धसाधकः ॥४१॥

३३६. **वामदेवः**—वामदेव ऋषिस्वरूप, ३३७. **वामः**—पापियों के प्रतिकूल, ३३८. **प्राक्**—सबके आदि, ३३९ **दक्षिणः**, ३४०. **वामनः**—बलि को बाँधनेवाले वामन रूपधारी, ३४१. **सिद्धयोगी**—सनत्कुमार आदि सिद्ध महात्मा, ३४२. **महर्षिः**, ३४३. **सिद्धार्थः**, ३४४. **सिद्धसाधकः**—सिद्ध और साधकरूप।

भिक्षुश्च भिक्षुरूपश्च विपणो मृदुरव्ययः।
महासेनो विशाखश्च षष्टिभागो गवां पतिः ॥४२॥

३४५. **भिक्षुः**—संन्यासी, ३४६. **भिक्षुरूप**., ३४७. **विपणः**—व्यवहार से अतीत, ३४८. **मृदुः**, ३४९. **अव्ययः**, ३५०. **महासेनः**—कार्तिकेयरूप सेनापति, ३५१. **विशाखः**—कार्तिकेय के सहायक, ३५२. **षष्टिभागः**—प्रभव आदि साठ भागों में विभक्त संवत्सररूप, ३५३. **गवाम्पतिः**—इन्द्रियों के स्वामी।

वज्रहस्तश्च विष्कम्भी चमूस्तम्भन एव च।
वृत्तावृत्तकरस्तालो मधुर्मधुकलोचनः ॥४३॥

३५४. **वज्रहस्तः**—हाथ में वज्र धारण करनेवाले, ३५५. **विष्कम्भी**—विस्तारयुक्त, ३५६. **चमूस्तम्भनः**—दैत्य सेना को स्तब्ध करनेवाले, ३५७. **वृत्तावृत्तकरः**—युद्ध में रथ के द्वारा मण्डल (वृत्त)

वनाना और शत्रुसेना को विदीर्ण कर लौट आना—इन दोनों को कुशलतापूर्वक करनेवाले, ३५८. **तालः**—आधार-स्थान—शुद्ध ब्रह्म को जाननेवाले, ३५९. **मधुः**—वसन्त ऋतुरूप, ३६०. **मधुकलोचनः**—मधु के समान पिंगल नेत्रवाले।

वाचस्पत्यो वाजसनो नित्यमाश्रमपूजितः।
ब्रह्मचारी लोकचारी सर्वचारी विचारवित्।।४४।।

३६१. **वाचस्पत्यः**—पुरोहित का काम करनेवाले, ३६२. **वाजसनः**—शुक्ल यजुर्वेद की माध्यन्दिनी शाखा के प्रवर्तक, ३६३. **नित्यमाश्रमपूजितः**—सदा आश्रमों द्वारा पूजित होनेवाले, ३६४. **ब्रह्मचारी**, ३६५. **लोकचारी**, ३६६. **सर्वचारी**—सर्वत्र गमन करनेवाले, ३६७. **विचारवित्**।

ईशान ईश्वरः कालो निशाचारी पिनाकवान्।
निमित्तस्थो निमित्तं च नन्दिर्नन्दिकरो हरिः।।४५।।

३६८. **ईशानः**—नियन्ता, ३६९. **ईश्वरः**, ३७०. **कालः**, ३७१. **निशाचारी**—प्रलयकाल की रात में विचरनेवाले, ३७२. **पिनाकवान्**—पिनाक धनुष धारण करनेवाले, ३७३. **निमित्तस्थः**—अन्तर्यामी, ३७४. **निमित्तम्**—निमित्त कारणरूप, ३७५. **नन्दिः**—ज्ञानसम्पत्तिरूप, ३७६. **नन्दिकरः**—ज्ञानरूपी सम्पत्ति देनेवाले, ३७७. **हरिः**—विष्णुस्वरूप।

नन्दीश्वरश्च नन्दी च नन्दनो नन्दिवर्द्धनः।
भगहारी निहन्ता च कालो ब्रह्मा पितामहः।।४६।।

३७८. **नन्दीश्वरः**—नन्दी नामक पार्षद के स्वामी, ३७९. **नन्दी**—नन्दी नामक गणरूप, ३८०. **नन्दनः**—परम आनन्द प्रदान करनेवाले, ३८१. **नन्दिवर्धनः**—समृद्धि बढ़ानेवाले, ३८२. **भगहारी**—ऐश्वर्य का अपहरण करनेवाले, ३८३. **निहन्ता**—मृत्युरूप से सबको मारनेवाले, ३८४. **कालः**—चौसठ कलाओं के निवासस्थान, ३८५. **ब्रह्मा**, ३८६. **पितामहः**—प्रजापति के भी पिता।

चतुर्मुखो महालिंगश्चारुलिंगस्तथैव च।
लिंगाध्यक्षः सुराध्यक्षो योगाध्यक्षो युगावहः।।४७।।

३८७. **चतुर्मुखः**, ३८८. **महालिंगः**—महालिंगस्वरूप, ३८९. **चारुलिंगः**—रमणीय वेषधारी, ३९०. **लिंगाध्यक्षः**—प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों के अध्यक्ष, ३९१. **सुराध्यक्षः**, ३९२. **योगाध्यक्षः**, ३९३. **युगावहः**—चारों युगों के निर्वाहक।

बीजाध्यक्षो बीजकर्ता अध्यात्मानुगतो बलः।
इतिहासः सकल्पश्च गौतमोऽथ निशाकरः ॥४८॥

३९४. **बीजाध्यक्षः**—कारणों के अध्यक्ष, ३९५. **बीजकर्ता**—कारणों के उत्पादक, ३९६. **अध्यात्मानुगतः**—अध्यात्म शास्त्र का अनुसरण करनेवाले, ३९७. **बलः**, ३९८. **इतिहासः**, ३९९. **सकल्पः**—कल्प—यज्ञों के प्रयोग और विधि के विचार के साथ मीमांसा और न्याय का समूह, ४००. **गौतमः**, ४०१. **निशाकरः**।

दम्भो ह्यदम्भो वैदम्भो वश्यो वशकरः कलिः।
लोककर्ता पशुपतिर्महाकर्ता ह्यनौषधः ॥४९॥

४०२. **दम्भः**—शत्रुओं का दमन करनेवाले, ४०३ **अदम्भः**, ४०४. **वैदम्भः**—दम्भरहित पुरुषों के आत्मीय, ४०५. **वश्यः**—भक्तपराधीन, ४०६. **वशकरः**—दूसरों को वश में करने की शक्ति रखनेवाले, ४०७. **कलिः**, ४०८. **लोककर्ता**, ४०९. **पशुपतिः**—जीवों के स्वामी, ४१० **महाकर्ता**—सृष्टि की रचना करनेवाले, ४११. **अनौषधः**—अन्न आदि औषधियों के सेवन से रहित।

अक्षरं परमं ब्रह्म बलवच्छक्र एव च।
नीतिर्ह्यनीतिः शुद्धात्मा शुद्धो मान्यो गतागतः ॥५०॥

४१२. **अक्षरम्**—ब्रह्म, ४१३. **परमं ब्रह्म**, ४१४. **बलवत्**, ४१५. **शक्रः**—इन्द्र, ४१६. **नीतिः**—न्यायस्वरूप, ४१७. **अनीतिः**—साम, दाम, दण्ड, भेद से रहित, ४१८. **शुद्धात्मा**, ४१९. **शुद्धः**, ४२०. **मान्यः**, ४२१. **गतागतः**—गमनागमनशील संसारस्वरूप।

बहुप्रसादः सुस्वप्नो दर्पणोऽथ त्वमित्रजित्।
वेदकारो मन्त्रकारो विद्वान् समरमर्दनः ॥५१॥

४२२. **बहुप्रसादः**—अधिक कृपा करनेवाले, ४२३. **सुस्वप्नः**—

सुन्दर स्वप्नवाले, ४२४. **दर्पणः**, ४२५. **अमित्रजित्**, ४२६. **वेदकारः**, ४२७. **मन्त्रकारः**—मन्त्रों का आविष्कार करनेवाले, ४२८. **विद्वान्**, ४२९. **समरमर्दनः**—समरांगण में शत्रुओं का संहार करनेवाले।

महामेघनिवासी च महाघोरो वशी करः।
अग्निज्वालो महाज्वालो अतिधूम्रो हुतो हविः ॥५२॥

४३०. **महामेघनिवासी**—प्रलयकालिक मेघों में निवास करनेवाले, ४३१. **महाघोरः**—प्रलय करनेवाले, ४३२. **वशी**, ४३३. **करः**—संहारकारी, ४३४. **अग्निज्वालः**—अग्नि की ज्वाला के समान तेजवाले, ४३५. **महाज्वालः**, ४३६. **अतिधूम्रः**—कालाग्नि रूप से दाहकाल में अत्यन्त धूम्र वर्णवाले, ४३७. **हुतः**—आहुति पाकर प्रसन्न होनेवाले, अग्निरूप, ४३८. **हविः**—हवनीय पदार्थरूप।

वृषणः शंकरो नित्यं वर्चस्वी धूमकेतनः।
नीलस्तथांगलुब्धश्च शोभनो निरवग्रहः ॥५३॥

४३९. **वृषणः**—धर्मस्वरूप, ४४०. **शंकरः**, ४४१. **नित्यं वर्चस्वी**—सदा तेज से जगमगाते रहनेवाले, ४४२. **धूमकेतनः**—अग्निस्वरूप, ४४३. **नीलः**—श्यामवर्ण, ४४४. **अंगलुब्ध**—अपने सौन्दर्य पर स्वयं ही लुभाये रहनेवाले, ४४५. **शोभनः**, ४४६. **निरवग्रहः**—प्रतिबन्ध रहित।

स्वस्तिदः स्वस्तिभावश्च भागी भागकरो लघुः।
उत्संगश्च महांगश्च महागर्भपरायणः ॥५४॥

४४७. **स्वस्तिदः**—कल्याणदायक, ४४८. **स्वस्तिभावः**—कल्याणमयी सत्ता, ४४९. **भागी**—यज्ञ में भाग लेनेवाले, ४५०. **भागकरः**—यज्ञ के हविष्य का विभाजन करनेवाले, ४५१. **लघुः**, ४५२. **उत्संगः**—संगरहित, ४५३. **महांगः**—महान् अंगवाले, ४५४. **महागर्भपरायण**—: हिरण्यगर्भ के परम आश्रय।

कृष्णवर्णः सुवर्णश्च इन्द्रियं सर्वदेहिनाम्।
महापादो महाहस्तो महाकायो महायशाः ॥५५॥

४५५. **कृष्णवर्णः**—श्यामवर्ण विष्णुस्वरूप, ४५६. **सुवर्णः**,

४५७. **सर्वदेहिनाम् इन्द्रियम्**, ४५८. **महापादः**—लम्बे पैरों वाले, त्रिविक्रम, ४५९. **महाहस्तः**—लम्बे हाथवाले, ४६०. **महाकायः**, ४६१. **महायशाः**—महान् सुयशवाले।

महामूर्धा महामात्रो महानेत्रो निशालयः।
महान्तको महाकर्णो महोष्ठश्च महाहनुः ॥५६॥

४६२. **महामूर्धा**—महान् मस्तकवाले, ४६३. **महामात्रः**—विशाल नापवाले, ४६४. **महानेत्रः**, ४६५. **निशालयः**—निशा अर्थात् अविद्या के लयस्थान, ४६६. **महान्तकः**—मृत्यु की भी मृत्यु, ४६७. **महाकर्णः**, ४६८. **महोष्ठः**—लम्बे ओठवाले, ४६९. **महाहनुः**।

महानासो महाकम्बुर्महाग्रीवः श्मशानभाक्।
महावक्षा महोरस्को ह्यन्तरात्मा मृगालयः ।५७॥

४७०. **महानासः**, ४७१. **महाकम्बुः**—बड़े कण्ठवाले, ४७२. **महाग्रीवः**, ४७३. **श्मशानभाक्**—श्मशान में क्रीड़ा करनेवाले, ४७४. **महावक्षाः**, ४७५. **महोरस्कः**—चौड़ी छातीवाले, ४७६. **अन्तरात्मा**, ४७७. **मृगालयः**—मृग-शिशु को गोद में लिये रहनेवाले।

लम्बनो लम्बितोष्ठश्च महामायः पयोनिधिः।
महादन्तो महादंष्ट्रो महाजिह्वो महामुखः ॥५८॥

४७८. **लम्बनः**—ब्रह्माण्डों के आश्रय, ४७९. **लम्बितोष्ठः**—सम्पूर्ण विश्व को अपना ग्रास बनाने के लिए ओठों को फैलाये रखनेवाले, ४८०. **महामायः**, ४८१. **पयोनिधिः**, ४८२. **महादन्तः**—बड़े-बड़े दाँतवाले, ४८३ **महादंष्ट्रः**—बड़ी-बड़ी दाढ़वाले, ४८४. **महाजिह्वः**—विशाल जिह्वावाले, ४८५. **महामुखः**—बहुत बड़े मुखवाले।

महानखो महारोमा महाकोशो महाजटः।
प्रसन्नश्च प्रसादश्च प्रत्ययो गिरिसाधनः ॥५९॥

४८६. **महानखः**—बड़े-बड़े नखवाले नृसिंह, ४८७. **महारोमा**—विशाल रोमवाले वराहरूप, ४८८. **महाकोशः**—बहुत बड़े पेटवाले, ४८९. **महाजटः**—बड़ी-बड़ी जटावाले, ४९०. **प्रसन्नः**, ४९१. **प्रसादः**, ४९२. **प्रत्ययः**—ज्ञानस्वरूप, ४९३. **गिरिसाधनः**—पर्वत को युद्ध का

साधन बनानेवाले।

स्नेहनोऽस्नेहनश्चैव अजितश्च महामुनिः।
वृक्षाकारो वृक्षकेतुरनलो वायुवाहनः ॥६०॥

४९४. **स्नेहनः**—पिता की भाँति स्नेह रखनेवाले, ४९५. **अस्नेहनः**—आसक्ति-रहित, ४९६. **अजितः**—पराजित न होनेवाले, ४९७. **महामुनिः**, ४९८. **वृक्षाकारः**—संसार वृक्षस्वरूप, ४९९. **वृक्षकेतुः**—वृक्ष के समान ऊँची ध्वजावाले, ५००. **अनलः**, ५०१. **वायुवाहनः**।

गण्डली मेरुधामा च देवाधिपतिरेव च।
अथर्वशीर्षः सामास्य ऋक्सहस्रामितेक्षणः ॥६१॥

५०२. **गण्डली**—गुफाओं में छिपकर रहनेवाले, ५०३. **मेरुधामा**—मेरु पर्वत को अपना निवासस्थान बनानेवाले, ५०४. **देवाधिपतिः**, ५०५. **अथर्वशीर्षः**—अथर्ववेद जिनका मस्तक है, ५०६ **सामास्यः**—सामवेद जिनका मुख है, ५०७. **ऋक्सहस्रामितेक्षणः**—सहस्रों ऋचाएँ जिनके नेत्र हैं।

यजुःपादभुजो गुह्यः प्रकाशो जंगमस्तथा।
अमोघार्थः प्रसादश्च अभिगम्यः सुदर्शनः ॥६२॥

५०८. **यजुःपादभुजः**—यजुर्वेद जिनके हाथ-पैर हैं, ५०९. **गुह्यः**, ५१०. **प्रकाशः**, ५११. **जंगमः**—चलने-फिरनेवाले, ५१२. **अमोघार्थः**—किसी वस्तु के लिए याचना करने पर उसे अवश्य सफल बनानेवाले, ५१३. **प्रसादः**—दया करके शीघ्र प्रसन्न होनेवाले, ५१४. **अभिगम्यः**—सुगमता से प्राप्त होने योग्य, ५१५. **सुदर्शनः**।

उपकारः प्रियः सर्वः कनकः कांचनच्छविः।
नाभिर्नन्दिकरो भावः पुष्करस्थपतिः स्थिरः ॥६३॥

५१६. **उपकारः**, ५१७. **प्रियः**—प्रेमास्पद, ५१८. **सर्वः**, ५१९. **कनकः**—सुवर्णस्वरूप, ५२०. **कांचनच्छविः**—कांचन के समान कान्ति वाले, ५२१. **नाभिः**—समस्त भुवन का मध्यदेशरूप, ५२२. **नन्दिकरः**—आनन्द देनेवाले, ५२३. **भावः**—श्रद्धा-भक्तिरूप, ५२४. **पुष्करस्थपतिः**—ब्रह्माण्डरूपी पुष्कर का निर्माण करनेवाले, ५२५. **स्थिरः**।

द्वादशस्त्रासनश्चाद्यो यज्ञो यज्ञसमाहितः।
नक्तं कलिश्च कालश्च मकरः कालपूजितः ॥६४॥

५२६. **द्वादशः**—बारहवाँ श्रेष्ठ रुद्र, ५२७. **त्रासनः**—भयजनक, ५२८. **आद्यः**—सबके आदि कारण, ५२९. **यज्ञः**—यज्ञपुरुष, ५३०. **यज्ञसमाहितः**—यज्ञ में उपस्थित, ५३१. **नक्तम्**—रात्रिस्वरूप, ५३२. **कलिः**—कलि के स्वरूप, ५३३. **कालः**—सबको ग्रास बनानेवाले कालरूप, ५३४. **मकरः**—मकराकार शिशुमार चक्र, ५३५. **कालपूजितः**—मृत्यु के द्वारा पूजित।

सगणो गणकारश्च भूतवाहनसारथिः।
भस्मशयो भस्मगोप्ता भस्मभूतस्तरुर्गणः ॥६५॥

५३६. **सगणः**—गणों से युक्त, ५३७. **गणकारः**—बाणासुर आदि भक्तों को गणों में सम्मिलित करनेवाले, ५३८. **भूतवाहनसारथिः**—त्रिपुर-विनाश के लिए प्राणियों के योगक्षेम का निर्वाह करनेवाले ब्रह्मा को सारथि बनानेवाले, ५३९. **भस्मशयः**—भस्म पर शयन करनेवाले, ५४०. **भस्मगोप्ता**—भस्म द्वारा रक्षा करनेवाले, ५४१. **भस्मभूतः**—भस्मस्वरूप, ५४२. **तरुः**—कल्पवृक्ष रूप, ५४३. **गणः**—भृंगिरिटि और नन्दिकेश्वर आदि पार्षदरूप।

लोकपालस्तथालोको महात्मा सर्वपूजितः।
शुक्लस्त्रिशुक्लः सम्पन्नः शुचिर्भूतनिषेवितः ॥६६॥

५४४. **लोकपालः**, ५४५. **अलोकः**—लोकातीत, ५४६. **महात्मा**, ५४७. **सर्वपूजितः**, ५४८. **शुक्लः**—शुद्धस्वरूप, ५४९. **त्रिशुक्लः**—मन, वाणी और शरीर, ५५०. **सम्पन्नः**, ५५१. **शुचिः**, ५५२. **भूतनिषेवितः**—समस्त प्राणियों से सेवित।

आश्रमस्थः क्रियावस्थो विश्वकर्ममतिर्वरः।
विशालशाखस्ताम्रोष्ठो ह्यम्बुजालः सुनिश्चलः ॥६७॥

५५३ **आश्रमस्थः**, ५५४. **क्रियावस्थः**—यज्ञादि क्रियाओं में संलग्न, ५५५. **विश्वकर्ममतिः**—संसार की रचना में कुशल, ५५६. **वरः**, ५५७. **विशालशाखः**—लम्बी भुजाओंवाले, ५५८. **ताम्रोष्ठः**—

लाल ओठवाले, ५५९. **अम्बुजालः**—जलसमूह–सागररूप, ५६०. **सुनिश्चलः**—निश्चलरूप।

कपिलः कपिशः शुक्ल आयुश्चैव परोऽपरः।
गन्धर्वो ह्यदितिस्तार्क्ष्यः सुविज्ञेयः सुशारदः ॥६८॥

५६१. **कपिलः**—कपिल वर्ण, ५६२. **कपिशः**—पीले वर्णवाले, ५६३. **शुक्लः**, ५६४. **आयुः**—जीवनरूप, ५६५. **परः**—प्राचीन, ५६६. **अपरः**—अर्वाचीन, ५६७. **गन्धर्वः**, ५६८. **अदितिः**—देवमाता अदितिस्वरूप, ५६९. **तार्क्ष्यः**—विनतानन्दन गरुडरूप, ५७०. **सुविज्ञेयः**, ५७१. **सुशारदः**—उत्तम वाणी बोलनेवाले।

परश्वधायुधो देवो अनुकारी सुबान्धवः।
तुम्बवीणो महाक्रोध ऊर्ध्वरेता जलेशयः ॥६९॥

५७२. **परश्वधायुधः**, ५७३. **देवः**—महादेवस्वरूप, ५७४. **अनुकारी**—भक्तों का अनुकरण करनेवाले, ५७५. **सुबान्धवः**—उत्तम बांधवरूप, ५७६. **तुम्बवीणः**—तुम्बी की वीणा बजानेवाले, ५७७. **महाक्रोधः**, ५७८. **ऊर्ध्वरेताः**—अस्खलितवीर्य, ५७९. **जलेशयः**—विष्णुरूप से जल में शयन करनेवाले।

उग्रो वंशकरो वंशो वंशनादो ह्यनिन्दितः।
सर्वांगरूपो मायावी सुहृदो ह्यनिलोऽनलः ॥७०॥

५८०. **उग्रः**—प्रलयकाल में भयंकर रूप धारण करनेवाले, ५८१. **वंशकरः**—वंशप्रवर्त्तक, ५८२. **वंशः**—वंशस्वरूप, ५८३. **वंशनादः**—श्रीकृष्णरूप से वंशी बजानेवाले, ५८४. **अनिन्दितः**—निन्दारहित, ५८५. **सर्वांगरूपः**, ५८६. **मायावी**, ५८७. **सुहृदः**, ५८८. **अनिलः**, ५८९. **अनलः**।

बन्धनो बन्धकर्त्ता च सुबन्धनविमोचनः।
सयज्ञारिः सकामारिर्महादंष्ट्रो महायुधः ॥७१॥

५९०. **बन्धनः**, ५९१. **बन्धकर्त्ता**—बन्धनरूप संसार के निर्माता, ५९२. **सुबन्धनविमोचनः**—बन्धन से छुड़ानेवाले, ५९३. **सयज्ञारिः**—दक्षयज्ञ-शत्रुओं के साथी, ५९४. **सकामारिः**—कामविजयी के साथी,

५९५. महादंष्ट्रः—बड़ी-बड़ी दाढ़वाले नरसिंहरूप, ५९६. महायुधः ।

बहुधा निन्दितः शर्वः शंकरः शंकरोऽधनः ।
अमरेशो महादेवो विश्वदेवः सुरारिहा ॥७२॥

५९७. बहुधा निन्दितः—दक्ष और उनके समर्थकों द्वारा अनेक प्रकार से निन्दित, ५९८. शर्वः—सबका संहार करनेवाले, ५९९. शंकरः, ६००. शंकरः—भक्तों को आनन्द देनेवाले, ६०१. अधनः—सांसारिक धन से रहित, ६०२. अमरेशः, ६०३. महादेवः, ६०४. विश्वदेवः, ६०५. सुरारिहा—देवशत्रुओं का वध करनेवाले ।

अहिर्बुध्न्योऽनिलाभश्च चेकितानो हविस्तथा ।
अजैकपाच्च कापाली त्रिशंकुरजितः शिवः ॥७३॥

६०६. अहिर्बुध्न्यः—शेषनागस्वरूप, ६०७. अनिलाभः—वायु के समान वेगवान्, ६०८. चेकितानः—अतिशय ज्ञान सम्पन्न, ६०९. हविः—हविष्यरूप, ६१०. अजैकपाद्—ग्यारह रुद्रों में से एक, ६११. कापाली—दो कपालों से निर्मित कपालरूप ब्रह्माण्ड के अधीश्वर, ६१२. त्रिशंकुः—त्रिशंकुरूप, ६१३. अजितः, ६१४. शिवः ।

धन्वन्तरिर्धूमकेतुः स्कन्दो वैश्रवणस्तथा ।
धाता शक्रश्च विष्णुश्च मित्रस्त्वष्टा ध्रुवो धरः ॥७४॥

६१५. धन्वन्तरिः—महावैद्य धन्वन्तरिरूप, ६१६. धूमकेतुः—अग्निस्वरूप, ६१७. स्कन्दः—कार्तिकेयस्वरूप, ६१८. वैश्रवणः—कुबेरस्वरूप, ६१९. धाता, ६२०. शक्रः, ६२१. विष्णुः, ६२२. मित्रः—बारह आदित्यों में से एक, ६२३. त्वष्टा—प्रजापति विश्वकर्मा, ६२४. ध्रुवः—नित्यस्वरूप, ६२५. धरः—आठ वसुओं में से एक वसु ।

प्रभावः सर्वगो वायुरर्यमा सविता रविः ।
उषंगुश्च विधाता च मान्धाता भूतभावनः ॥७५॥

६२६. प्रभावः, ६२७. सर्वगो वायुः—सर्वव्यापी वायु—सूत्रात्मा, ६२८. अर्यमा—बारह आदित्यों में एक आदित्य अर्यमारूप, ६२९. सविता—सम्पूर्ण जगत् की उत्पत्ति करनेवाले, ६३०. रविः, ६३१. उषंगुः—सर्वदाहक सूर्यरूप, ६३२. विधाता, ६३३. मान्धाता—जीव

को तृप्ति प्रदान करनेवाले, ६३४. **भूतभावनः**—प्राणियों के उत्पादक।

विभुर्वर्णविभावी च सर्वकामगुणावहः।
पद्मनाभो महागर्भश्चन्द्रवक्त्रोऽनिलोऽनलः ॥७६॥

६३५. **विभुः**—विविधरूप से विद्यमान, ६३६. **वर्णविभावी**—श्वेत-पीत आदि वर्णों को विविध रूप से व्यक्त करनेवाले, ६३७. **सर्वकामगुणावहः**—समस्त भोगों और गुणों की प्राप्ति करानेवाले, ६३८. **पद्मनाभः**—अपनी नाभि से कमल को प्रकट करनेवाले विष्णु-रूप, ६३९. **महागर्भः**—विशाल ब्रह्माण्ड को उदर में धारण करनेवाले, ६४०. **चन्द्रवक्त्रः**—चन्द्रमा-जैसे मनोहर मुखवाले, ६४१. **अनिलः**—वायुदेव, ६४२. **अनलः**—अग्निदेव।

बलवांश्चोपशान्तश्च पुराणः पुण्यचंचुरी।
कुरुकर्त्ता कुरुवासी कुरुभूतो गुणौषधः ॥७७॥

६४३. **बलवान्**, ६४४. **उपशान्तः**, ६४५. **पुराणः**, ६४६. **पुण्यचंचुः**—पुण्य के द्वारा जानने में आनेवाले, ६४७. **ई**—दयास्वरूप, ६४८. **कुरुकर्त्ता**—कुरुक्षेत्र के निर्माता, ६४९. **कुरुवासी**—कुरुक्षेत्रनिवासी, ६५०. **कुरुभूतः**—कुरुक्षेत्रस्वरूप, ६५१. **गुणौषधः**—ज्ञान-वैराग्य आदि गुणों के उत्पादक।

सर्वाशयो दर्भचारी सर्वेषां प्राणिनां पतिः।
देवदेवः सुखासक्तः सदसत्सर्वरत्नवित् ॥७८॥

६५२. **सर्वाशयः**, ६५३. **दर्भचारी**—वेदी पर बिछे हुए—कुशों पर रखे हविष्य को भक्षण करनेवाले, ६५४. **सर्वेषां प्राणिनां पतिः**, ६५५. **देवदेवः**, ६५६. **सुखासक्तः**—परमानन्दमय स्वरूप में ही रत रहनेवाले, ६५७. **सत्**, ६५८. **असत्**, ६५९. **सर्वरत्नवित्**—समस्त रत्नों के ज्ञाता।

कैलासगिरिवासी च हिमवद्गिरिसंश्रयः।
कूलहारी कूलकर्ता बहुविद्यो बहुप्रदः ॥७९॥

६६०. **कैलासगिरिवासी**, ६६१. **हिमवद्गिरिसंश्रयः**, ६६२. **कूलहारी**—प्रबल प्रवाहरूप से नदियों के तटों का अपहरण करनेवाले,

६६३. कूलकर्ता—सरोवरों का निर्माण करनेवाले, ६६४. बहुविद्यः—वहुत-सी विद्याओं के ज्ञाता, ६६५. बहुप्रदः।

वणिजो वर्धकी वृक्षो वकुलश्चन्दनश्छदः।
सारग्रीवो महाजत्रुरलोलश्च महौषधः ॥८०॥

६६६. वणिजः—वैश्यरूप, ६६७. वर्धकी—संसाररूपी वृक्ष को काटनेवाले वढ़ई, ६६८. वृक्षः, ६६९. वकुलः, ६७०. चन्दनः, ६७१. छदः—छितवन वृक्षस्वरूप, ६७२. सारग्रीवः—सुदृढ़ कण्ठवाले, ६७३. महाजत्रुः—वहुत वड़ी हँसुलीवाले, ६७४. अलोलः—अचंचल, ६७५. महौषधः।

सिद्धार्थकारी सिद्धार्थश्छन्दोव्याकरणोत्तरः।
सिंहनादः सिंहदंष्ट्रः सिंहगः सिंहवाहनः ॥८१॥

६७६. सिद्धार्थकारी—आश्रितजनों को सफल मनोरथ करनेवाले, ६७७. सिद्धार्थः—वेद की व्याख्या से निर्णीत उत्कृष्ट सिद्धान्तस्वरूप, ६७८. सिंहनादः, ६७९. सिंहदंष्ट्रः, ६८०. सिंहगः—सिंह पर आरूढ़ होकर चलनेवाले, ६८१. सिंहवाहनः।

प्रभावात्मा जगत्कालस्थालो लोकहितस्तरुः।
सारंगो नवचक्रांगः केतुमाली सभावनः ॥८२॥

६८२ प्रभावात्मा—उत्कृष्ट सत्तास्वरूप, ६८३. जगत्कालस्थालः—जगत् का संहार करनेवाले काल के स्थान, ६८४. लोकहितः, ६८५. तरुः—तारनेवाले, ६८६. सारंगः—चातकस्वरूप, ६८७. नवचक्रांगः—नूतन हंसरूप, ६८८. केतुमाली—ध्वजा—पताकाओं की मालाओं से अलंकृत, ६८९. सभावनः—धर्मस्थान की रक्षा करनेवाले।

भूतालयो भूतपतिरहोरात्रमनिन्दितः ॥८३॥

६९०. भूतालयः—भूतों के घर, ६९१. भूतपतिः—सम्पूर्ण प्राणियों के स्वामी, ६९२. अहोरात्रम्, ६९३. अनिन्दितः।

वाहिता सर्वभूतानां निलयश्च विभुर्भवः।
अमोघः संयतो ह्यश्वो भोजनः प्राणधारणः ॥८४॥

६९४. सर्वभूतानां वाहिता—सम्पूर्ण भूतों का भार वहन करने-

वाले, ६९५. **सर्वभूतानां निलयः**—सर्व प्राणियों के निवास-स्थान, ६९६. **विभुः**—सर्वव्यापी, ६९७. **भवः**—सत्तारूप, ६९८. **अमोघः**, ६९९. **संयतः**—संयमशील, ७००. **अश्वः**—उच्चैःश्रवा आदि उत्तम अश्वरूप, ७०१. **भोजनः**—अन्नदाता, ७०२. **प्राणधारणः**—सबके प्राणों की रक्षा करनेवाले।

धृतिमान् मतिमान् दक्षः सत्कृतश्च युगाधिपः।
गोपालिर्गोपतिर्ग्रामो गोचर्मवसनो हरिः॥८५॥

७०३. **धृतिमान्**, ७०४. **मतिमान्**, ७०५. **दक्षः**, ७०६. **सत्कृतः**—सबके द्वारा सम्मानित, ७०७. **युगाधिपः**—युग के स्वामी, ७०८. **गोपालिः**—इन्द्रियों के पालक, ७०९. **गोपतिः**—गौओं के स्वामी, ७१०. **ग्रामः**, ७११. **गोचर्मवसनः**—गोचर्ममय वस्त्र धारण करनेवाले, ७१२. **हरिः**—भक्तों का दुःख हर लेनेवाले।

हिरण्यबाहुश्च तथा गुहापालः प्रवेशिनाम्।
प्रकृष्टारिर्महाहर्षो जितकामो जितेन्द्रियः॥८६॥

७१३. **हिरण्यबाहुः**—सुनहरी कान्तिवाली सुन्दर भुजाओं से सुशोभित, ७१४. **गुहापालः प्रवेशिनाम्**—गुफा के भीतर प्रवेश करनेवाले योगियों की गुफा के रक्षक, ७१५. **प्रकृष्टारिः**—काम, क्रोध आदि शत्रुओं को क्षीण कर देनेवाले, ७१६. **महाहर्षः**, ७१७. **जितकामः**, ७१८. **जितेन्द्रियः**—इन्द्रियविजयी।

गान्धारश्च सुवासश्च तपःसक्तो रतिर्नरः।
महागीतो महानृत्यो ह्यप्सरोगणसेवितः॥८७॥

७१९. **गान्धारः**—गान्धार नामक स्वररूप, ७२०. **सुवासः**—कैलास नामक सुन्दर स्थान में निवास करनेवाले, ७२१. **तपःसक्तः**, ७२२. **रतिः**, ७२३. **नरः**—विराट् पुरुष, ७२४. **महागीतः**—जिनके माहात्म्य का वेद-शास्त्रों द्वारा गान किया गया है, ७२५. **महानृत्यः**—प्रकाण्ड ताण्डव करनेवाले, ७२६. **अप्सरोगणसेवितः**।

महाकेतुर्महाधातुर्नैकसानुचरश्चलः।
आवेदनीय आदेशः सर्वगन्धसुखावहः॥८८॥

७२७. **महाकेतुः**—धर्मरूप महान् ध्वजावाले, ७२८. **महाधातुः**—सुवर्णस्वरूप, ७२९. **नैकसानुचरः**—मेरुगिरि के शिखरों पर विचरनेवाले, ७३०. **चलः**—किसीकी पकड़ में नहीं आनेवाले, ७३१. **आवेदनीयः**—प्रार्थना करनेयोग्य, ७३२. **आदेशः**, ७३३. **सर्वगन्धसुखावहः**—सम्पूर्ण गन्धादि विषयों के सुख की प्राप्ति करानेवाले।

तोरणस्तारणो वातः परिधी पतिखेचरः।
संयोगो वर्धनो वृद्धो अतिवृद्धो गुणाधिकः॥८९॥

७३४. **तोरणः**—मुक्तिद्वारस्वरूप, ७३५. **तारणः**, ७३६. **वातः**—वायुरूप, ७३७. **परिधी**—ब्रह्माण्ड का घेरारूप, ७३८. **पतिखेचरः**—आकाशचारी का स्वामी, ७३९. **वर्धनः संयोगः**—वृद्धि के हेतुभूत, ७४०. **वृद्धः**—गुणों में बढ़ा-चढ़ा, ७४१. **अतिवृद्धः**—सबसे पुरातन, ७४२. **गुणाधिकः**—ज्ञान, ऐश्वर्य आदि गुणों में सबसे अधिकतर।

नित्य आत्मसहायश्च देवासुरपतिः पतिः।
युक्तश्च युक्तबाहुश्च देवो दिविसुपर्वणः॥९०॥

७४३. **नित्य आत्मसहायः**, ७४४. **देवासुरपतिः**, ७४५. **पतिः**, ७४६. **युक्तः**—सदा उद्यत, ७४७. **युक्तबाहुः**—सबकी रक्षा के लिए उपयुक्त भुजाओंवाले, ७४८. **देवो दिविसुपर्वणः**—इन्द्र के भी आराध्यदेव।

आषाढश्च सुषाढश्च ध्रुवोऽथ हरिणो हरः।
वपुरावर्तमानेभ्यो वसुश्रेष्ठो महापथः॥९१॥

७४९. **आषाढः**—सब-कुछ सहन करने की शक्ति देनेवाले, ७५०. **सुषाढः**—उत्तम सहनशील, ७५१. **ध्रुवः**, ७५२. **हरिणः**—शुद्धस्वरूप, ७५३. **हरः**—पापहारी, ७५४. **आवर्तमानेभ्यो वपुः**—स्वर्गलोक से लौटनेवाले को नूतन शरीर देनेवाले, ७५५. **वसुश्रेष्ठः**—मुक्तिस्वरूप, ७५६. **महापथः**।

शिरोहारी विमर्शश्च सर्वलक्षणलक्षितः।
अक्षश्च रथयोगी च सर्वयोगी महाबलः॥९२॥

७५७. **विमर्शः शिरोहारी**—विवेकपूर्वक दुष्टों का शिरश्छेद

करनेवाले, ७५८. **सर्वलक्षणलक्षितः**, ७५९. **अक्षः रथयोगी**—धुरी-स्वरूप, ७६०. **सर्वयोगी**, ७६१. **महाबलः**।

समाम्नायोऽसमाम्नायस्तीर्थदेवो महारथः।
निर्जीवो जीवनो मन्त्रः शुभाक्षो वहुकर्कशः ॥९३॥

७६२. **समाम्नायः**—वेदस्वरूप, ७६३. **असमाम्नायः**—वेदभिन्न स्मृति, इतिहास, पुराण और आगमरूप, ७६४. **तीर्थदेवः**, ७६५. **महारथः**—विशाल रथ पर आरूढ़ होनेवाले, ७६६. **निर्जीवः**—जड-प्रपंच-स्वरूप, ७६७. **जीवनः**, ७६८. **मन्त्रः**—प्रणव आदि मन्त्रस्वरूप, ७६९. **शुभाक्षः**—मंगलमयी दृष्टिवाले, ७७०. **बहुकर्कशः**—अत्यन्त कठोर स्वभाववाले।

रत्नप्रभूतो रत्नांगो महार्णवनिपानवित्।
मूलं विशालो ह्यमृतो व्यक्ताव्यक्तस्तपोनिधिः ॥९४॥

७७१. **रत्नप्रभूतः**—रत्नों के भण्डार, ७७२. **रत्नांगः**—रत्नमय अंगवाले, ७७३ **महार्णवनिपानवित्**—महासागररूपी निपानों को जाननेवाले, ७७४. **मूलम्**, ७७५. **विशालः**, ७७६ **अमृतः**—अमृत-स्वरूप, ७७७. **व्यक्ताव्यक्तः**—निराकार, ७७८. **तपोनिधिः**।

आरोहणोऽधिरोहश्च शीलधारी महायशाः।
सेनाकल्पो महाकल्पो योगो युगकरो हरिः ॥९५॥

७७९. **आरोहणः**—परम पद पर आरूढ़ होने के द्वारस्वरूप, ७८०. **अधिरोहः**—परम पद पर आरूढ़, ७८१. **शीलधारी**, ७८२. **महायशाः**, ७८३. **सेनाकल्पः**—सेना के आभूषणस्वरूप, ७८४. **महाकल्पः**—वहुमूल्य अलंकारों से अलंकृत, ७८५. **योगः**—चित्त-वृत्तियों के निरोध स्वरूप, ७८६. **युगकरः**, ७८७. **हरिः**—भक्तों का दुःख हर लेनेवाले।

युगरूपो महारूपो महानागहनोऽवधः।
न्यायनिर्वपणः पादः पण्डितो ह्यचलोपमः ॥९६॥

७८८. **युगरूपः**—युगस्वरूप, ७८९. **महारूपः**, ७९०. **महानागहनः**—विशालकाय गजासुर का वध करनेवाले, ७९१. **अवधः**—मृत्युरहित,

७९२. **न्यायनिर्वपणः**—न्यायोचित दान करनेवाले, ७९३. **पादः**—शरण लेने योग्य, ७९४. **पण्डितः**, ७९५. **अचलोपमः**।

वहुमालो महामालः शशी हरसुलोचनः।
विस्तारो लवणः कूपस्त्रियुगः सफलोदयः ॥९७॥

७९६. **बहुमालः**—बहुत-सी मालाएँ धारण करनेवाले, ७९७. **महामालः**—महती माला धारण करनेवाले, ७९८. **शशी हरसु-लोचनः**—चन्द्रमा के समान सौम्य दृष्टियुक्त, ७९९. **विस्तारो लवणः कूपः**—विस्तृत क्षारसमुद्ररूप, ८००. **त्रियुगः**, ८०१. **सफलोदयः**—जिसका अवतार होना सफल है।

त्रिलोचनो विषण्णांगो मणिविद्धो जटाधरः
विन्दुर्विसर्गः सुमुखः शरः सर्वायुधः सहः ॥९८॥

८०२. **त्रिलोचनः**, ८०३. **विषण्णांगः**—सर्वथा निराकार, ८०४. **मणिविद्धः**—मणि के कुण्डल पहनने के लिए छिदे हुए कर्णवाले, ८०५. **जटाधरः**, ८०६. **विन्दुः**—अनुस्वाररूप, ८०७. **विसर्गः**—विसर्जनीयस्वरूप, ८०८. **सुमुखः**, ८०९. **शरः**—बाणस्वरूप, ८१०. **सर्वायुधः**—सम्पूर्ण आयुधों से युक्त, ८११. **सहः**—सहनशील।

निवेदनः सुखाजातः सुगन्धारो महाधनुः।
गन्धपाली च भगवानुत्थानः सर्वकर्मणाम् ॥९९॥

८१२. **निवेदनः**—सब प्रकार की वृत्ति से रहित ज्ञानवाले, ८१३. **सुखाजात**—सब वृत्तियों का लय होने पर सुखरूप से प्रकट होनेवाले, ८१४. **सुगन्धारः**, ८१५. **महाधनुः**—पिनाक धनुष धारण करनेवाले, ८१६. **भगवान् गन्धपाली**—उत्तम गन्ध की रक्षा करनेवाले भगवान्, ८१७. **सर्वकर्मणामुत्थानः**—समस्त कर्मों के उत्थानस्थान।

मन्थानो वहुलो वायुः सकलः सर्वलोचनः।
तलस्तालः करस्थाली ऊर्ध्वसंहननो महान् ॥१००॥

८१८. **मन्थानो बहुलो वायुः**—विश्व को मथ डालने में समर्थ प्रलयकाल की महान् वायुस्वरूप, ८१९. **सकलः**, ८२०. **सर्वलोचनः**, ८२१. **तलस्तालः**—हाथ पर ही ताल देनेवाले, ८२२. **करस्थाली**—

हाथों से ही भोजनपात्र का काम लेनेवाले, ८२३. **ऊर्ध्वसंहननः**—सुदृढ़ शरीरवाले, ८२४. **महान्**।

छत्रं सुच्छत्रो विख्यातो लोकः सर्वाश्रयः क्रमः।
मुण्डो विरूपो विकृतो दण्डी कुण्डी विकुर्वणः॥१०१॥

८२५. **छत्रम्**, ८२६. **सुच्छत्रः**—उत्तम छत्रस्वरूप, ८२७. **विख्यातो लोकः**—सुप्रसिद्ध, ८२८. **सर्वाश्रयः क्रम**—सबके आधारभूत गति, ८२९. **मुण्डः**—मुण्डित मस्तक, ८३०. **विरूपः**, ८३१. **विकृतः**—विपरीत क्रियाओं को धारण करनेवाले, ८३२. **दण्डी**, ८३३. **कुण्डी**—खप्परधारी, ८३४. **विकुर्वणः**—क्रिया द्वारा अलभ्य।

हर्यक्षः ककुभो वज्री शतजिह्वः सहस्रपात्।
सहस्रमूर्धा देवेन्द्रः सर्वदेवमयो गुरुः॥१०२॥

८३५. **हर्यक्षः**—सिंहस्वरूप, ८३६. **ककुभः**—समस्त दिशास्वरूप, ८३७. **वज्री**, ८३८. **शतजिह्वः**, ८३९. **सहस्रपात् सहस्रमूर्धा**—सहस्रों पैरों और मस्तकोंवाले, ८४०. **देवेन्द्रः**, ८४१. **सर्वदेवमयः**, ८४२. **गुरुः**।

सहस्रबाहुः सर्वांगः शरण्यः सर्वलोककृत्।
पवित्रं त्रिककुन्मन्त्रः कनिष्ठः कृष्णपिंगलः॥१०३॥

८४३. **सहस्रबाहुः**, ८४४. **सर्वांगः**, ८४५. **शरण्यः**—शरण लेने के योग्य, ८४६. **सर्वलोककृत्**—सम्पूर्ण लोकों के उत्पन्न करनेवाले, ८४७. **पवित्रम्**, ८४८. **त्रिककुन्मन्त्रः**—त्रिपदा गायत्रीरूप, ८४९. **कनिष्ठः**—अदिति के पुत्रों में छोटे, वामनरूपधारी विष्णु, ८५०. **कृष्णपिंगलः**—श्याम-गौर हरि-हर-मूर्ति।

ब्रह्मदण्डविनिर्माता शतघ्नीपाशशक्तिमान्।
पद्मगर्भो महागर्भो ब्रह्मगर्भो जलोद्भवः॥१०४॥

८५१. **ब्रह्मदण्डविनिर्माता**, ८५२. **शतघ्नीपाशशक्तिमान्**—शतघ्नी, पाश और शक्ति से युक्त, ८५३. **पद्मगर्भः**—ब्रह्मास्त्ररूप, ८५४. **महागर्भः**—जगत्रूपी गर्भ धारण करनेवाले महागर्भ, ८५५. **ब्रह्मगर्भः**—वेद को गर्भ में धारण करनेवाले, ८५६. **जलोद्-**

भवः—जल में प्रकट होनेवाले ।

गभस्तिर्ब्रह्मकृद् ब्रह्मी ब्रह्मविद् ब्राह्मणो गतिः ।
अनन्तरूपो नैकात्मा तिग्मतेजाः स्वयम्भुवः ॥१०५॥

८५७. **गभस्तिः**—सूर्यस्वरूप, ८५८. **ब्रह्मकृत्**—वेदों का पता लगानेवाले, ८५९. **ब्रह्मी**—वेदाध्यायी, ८६०. **ब्रह्मवित्**, ८६१. **ब्राह्मणः**—ब्रह्मनिष्ठ, ८६२. **गतिः**—परमगति, ८६३. **अनन्तरूपः**, ८६४. **नैकात्मा**—अनेक शरीरधारी, ८६५. **तिग्मतेजाःस्वयम्भुवः**—ब्रह्मा की अपेक्षा प्रचण्ड तेजस्वी ।

ऊर्ध्वगात्मा पशुपतिर्वातरंहा मनोजवः ।
चन्दनी पद्मनालाग्रः सुरभ्युत्तरणो नरः ॥१०६॥

८६६. **ऊर्ध्वगात्मा**—देश-काल-वस्तु की उपाधि से अतीत स्वरूपवाले, ८६७. **पशुपतिः**, ८६८. **वातरंहाः**—वायु के समान वेगशाली, ८६९. **मनोजवः**—मन के समान वेगशाली, ८७०. **चन्दनी**—चन्दनचर्चित अंगवाले, ८७१. **पद्मनालाग्रः**—पद्मनाल के मूल विष्णुस्वरूप, ८७२. **सुरभ्युत्तरणः**—सुरभि को नीचे उतारनेवाले, ८७३. **नरः** ।

कर्णिकारमहास्रग्वी नीलमौलिः पिनाकधृत् ।
उमापतिरुमाकान्तो जाह्नवीधृदुमाधवः ॥१०७॥

८७४. **कर्णिकारमहास्रग्वी**—कनेर की विशाल माला धारण करनेवाले, ८७५. **नीलमौलिः**—मस्तक पर नीलमणि का मुकुट धारण करनेवाले, ८७६. **पिनाकधृत्**, ८७७. **उमापतिः**, ८७८. **उमाकांतः**—पार्वती के प्रियतम, ८७९. **जाह्नवीधृत्**—गंगा को मस्तक पर धारण करनेवाले, ८८०. **उमाधवः**—पार्वतीपति ।

वरो वराहो वरदो वरेण्यः सुमहास्वनः ।
महाप्रसादो दमनः शत्रुहा श्वेतपिंगलः ॥१०८॥

८८१. **वरो वराहः**—वराहरूपधारी भगवान्, ८८२. **वरदः**, ८८३. **वरेण्यः**—स्वामी बनाने योग्य, ८८४. **सुमहास्वनः**—महान् गर्जना करनेवाले, ८८५. **महाप्रसादः**—महान् अनुग्रह करनेवाले,

८८६. **दमनः**—दमन करनेवाले, ८८७ **शत्रुहा**, ८८८. **श्वेतपिंगलः**—अर्धनारीनरेश्वर-वेश में श्वेत-पिंगल वर्णवाले।

पीतात्मा परमात्मा च प्रयतात्मा प्रधानधृत्।
सर्वपार्श्वमुखस्त्र्यक्षो धर्मसाधारणो वरः ॥१०९॥

८८९. **पीतात्मा**—हिरण्मय पुरुष, ८९०. **परमात्मा**, ८९१. **प्रयतात्मा**—विशुद्ध चित्त, ८९२. **प्रधानधृत्**—त्रिगुणमय प्रकृति के अधिष्ठान, ८९३. **सर्वपार्श्वमुखः**—सम्पूर्ण दिशाओं की ओर मुखवाले, ८९४. **त्र्यक्षः**—त्रिनेत्रधारी, ८९५. **धर्मसाधारणो वरः**—धर्म-पालन के अनुसार वर देनेवाले।

चराचरात्मा सूक्ष्मात्मा अमृतो गोवृषेश्वरः।
साध्यर्षिर्वसुरादित्यो विवस्वान् सवितामृतः ॥११०॥

८९६. **चराचरात्मा**, ८९७. **सूक्ष्मात्मा**, ८९८. **अमृतो गोवृषेश्वरः**—निष्काम धर्म के स्वामी, ८९९. **साध्यर्षिः**—साध्य देवताओं के आचार्य, ९००. **आदित्यो वसुः**—अदितिकुमार वसु, ९०१. **विवस्वान् सवितामृतः**—जगत् को उत्पन्न करनेवाले अमृतस्वरूप सूर्य।

व्यासः सर्गः सुसंक्षेपो विस्तरः पर्ययो नरः।
ऋतुः संवत्सरो मासः पक्षः संख्यासमापनः ॥१११॥

९०२. **व्यासः**—वेदव्यासस्वरूप, ९०३. **सर्गः सुसंक्षेपो विस्तरः**—संक्षिप्त और विस्तृत सृष्टि स्वरूप, ९०४. **पर्ययो नरः**—सब ओर से व्याप्त करनेवाले, वैश्वानरस्वरूप, ९०५. **ऋतुः**, ९०६. **संवत्सरः**, ९०७. **मासः**, ९०८. **पक्षः**, ९०९. **संख्यासमापनः**—ऋतु आदि की संख्या समाप्त करनेवाले, पर्व (संक्रान्ति, दर्श, पूर्णमासादि) रूप।

कलाः काष्ठा लवा मात्रा मुहूर्ताहःक्षपाः क्षणाः।
विश्वक्षेत्रं प्रजाबीजं लिंगमाद्यस्तु निर्गमः ॥११२॥

९१०. **कलाः**, ९११. **काष्ठाः**, ९१२. **लवाः**, ९१३. **मात्राः**, ९१४. **मुहूर्ताहःक्षपाः**—मुहूर्त दिन और रात्रिरूप, ९१५. **क्षणाः**, ९१६. **विश्वक्षेत्रम्**—ब्रह्माण्डरूपी वृक्ष के आधार, ९१७. **प्रजाबीजम्**, ९१८. **लिंगम्**—महत्तत्त्वस्वरूप, ९१९. **आद्यो निर्गमः**—सबसे पहले

प्रकट होनेवाले।

सदसद् व्यक्तमव्यक्तं पिता माता पितामहः।
स्वर्गद्वारं प्रजाद्वारं मोक्षद्वारं त्रिविष्टपम् ॥११३॥

९२०. **सत्**, ९२१. **असत्**, ९२२. **व्यक्तम्**, ९२३. **अव्यक्तम्**, ९२४. **पिता**, ९२५. **माता**, ९२६. **पितामहः**, ९२७. **स्वर्गद्वारम्**, ९२८. **प्रजाद्वारम्**—प्रजा के कारण, ९२९. **मोक्षद्वारम्**—मोक्ष के साधनरूप, ९३०. **त्रिविष्टपम्**—स्वर्ग के साधनस्वरूप।

निर्वाणं ह्लादनश्चैव ब्रह्मलोकः परा गतिः।
देवासुरविनिर्माता देवासुरपरायणः ॥११४॥

९३१. **निर्वाणम्**, ९३२. **ह्लादनः**—आनन्द देनेवाले, ९३३. **ब्रह्मलोकः**, ९३४. **परा गतिः**—सर्वोत्कृष्टगतिस्वरूप, ९३५. **देवासुरविनिर्माता**, ९३६. **देवासुरपरायणः**—देवताओं तथा असुरों के परम आश्रय।

देवासुरगुरुर्देवो देवासुरनमस्कृतः।
देवासुरमहामात्रो देवासुरगणाश्रयः ॥११५॥

९३७. **देवासुरगुरुः**, ९३८. **देवः**, ९३९. **देवासुरनमस्कृतः**—देवताओं व असुरों से वन्दित, ९४०. **देवासुरमहामात्रः**—देवताओं और असुरों से अत्यन्त श्रेष्ठ, ९४१. **देवासुरगणाश्रयः**।

देवासुरगणाध्यक्षो देवासुरगणाग्रणीः।
देवातिदेवो देवर्षिर्देवासुरवरप्रदः ॥११६॥

९४२. **देवासुरगणाध्यक्षः**—देवताओं व असुरों के अध्यक्ष, ९४३. **देवासुरगणाग्रणीः**—देवताओं व असुरों के नेता, ९४४. **देवातिदेवः**, ९४५. **देवर्षिः**—नारदस्वरूप, ९४६. **देवासुरवरप्रदः**—देवताओं और असुरों को वरदान देनेवाले।

देवासुरेश्वरो विश्वो देवासुरमहेश्वरः।
सर्वदेवमयोऽचिन्त्यो देवतात्माऽऽत्मसम्भवः ॥११७॥

९४७. **देवासुरेश्वरः**, ९४८. **विश्वः**—विराट्स्वरूप, ९४९. **देवासुरमहेश्वरः**, ९५०. **सर्वदेवमयः**, ९५१. **अचिन्त्यः**—अचिन्त्य, ९५२.

देवतात्मा, ९५३. आत्मसम्भवः—स्वयम्भू ।

उद्भित् त्रिविक्रमो वैद्यो विरजो नीरजोऽमरः ।
ईड्यो हस्तीश्वरो व्याघ्रो देवसिंहो नरर्षभः ॥११८॥

९५४, उद्भित्—वृक्षादिस्वरूप, ९५५. त्रिविक्रमः—तीनों लोकों को तीन चरणों से नाप लेनेवाले भगवान् वामन, ९५६. वैद्यः, ९५७. विरजः—रजोगुणरहित, ९५८. नीरजः—निर्मल, ९५९. अमरः, ९६०. ईड्यः—स्तुति के योग्य, ९६१. हस्तीश्वरः—ऐरावत के ईश्वर इन्द्रस्वरूप, ९६२. व्याघ्रः, ९६३. देवसिंहः, ९६४. नरर्षभः—मनुष्यों में श्रेष्ठ ।

विबुधोऽग्रवरः सूक्ष्मः सर्वदेवस्तपोमयः ।
सुयुक्तःशोभनो वज्री प्रासानां प्रभवोऽव्ययः ॥११९॥

९६५. विबुधः—विशेष ज्ञानवान्, ९६६. अग्रवरः—यज्ञ में सबसे प्रथम भाग लेने के अधिकारी, ९६७. सूक्ष्मः, ९६८. सर्वदेवः—सर्वदेव-स्वरूप, ९६९. तपोमयः, ९७०. सुयुक्तः—सब तरह से सावधान रहनेवाले, ९७१. शोभनः—कल्याणस्वरूप, ९७२. वज्री, ९७३. प्रासानां प्रभवः—प्रास नामक अस्त्र की उत्पत्ति करनेवाले, ९७४. अव्ययः ।

गुहः कान्तो निजः सर्गः पवित्रं सर्वपावनः ।
शृंगी शृंगप्रियो बभ्रू राजराजो निरामयः ॥१२०॥

९७५. गुहः—कार्तिकेयस्वरूप, ९७६. कान्तः—आनन्द की परा-काष्ठारूप, ९७७. निजःसर्गः—सृष्टि से अभिन्न, ९७८. पवित्रम्, ९७९. सर्वपावनः—सबको पवित्र करनेवाले, ९८०. शृंगी, ९८१. शृंगप्रियः—पर्वतशिखर को पसन्द करनेवाले, ९८२. बभ्रुः—विष्णु-स्वरूप, ९८३. राजराजः, ९८४. निरामयः—दोषरहित ।

अभिरामः सुरगणो विरामः सर्वसाधनः ।
ललाटाक्षो विश्वदेवो हरिणो ब्रह्मवर्चसः ॥१२१॥

९८५. अभिरामः, ९८६. सुरगणः, ९८७. विरामः—सबसे उपरत, ९८८. सर्वसाधनः, ९८९. ललाटाक्षः—ललाट में तीसरा नेत्र

धारण करनेवाले, ९९०. **विश्वदेवः**, ९९१. **हरिणः**—मृगरूप, ९९२. **ब्रह्मवर्चसः**—ब्रह्म तेज से सम्पन्न।

स्थावराणां पतिश्चैव नियमेन्द्रियवर्धनः।
सिद्धार्थः सिद्धभूतार्थोऽचिन्त्यः सत्यव्रतः शुचिः ॥१२२॥

९९३. **स्थावराणां पतिः**—पर्वतों के स्वामी, ९९४. **नियमेन्द्रिय-वर्धनः**—नियमों द्वारा इन्द्रियों का दमन करनेवाले, ९९५. **सिद्धार्थः**—आप्तकाम, ९९६. **सिद्धभूतार्थः**—जिसके समस्त प्रयोजन सिद्ध हैं, ९९७. **अचिन्त्यः**—चित्त की पहुँच से परे, ९९८. **सत्यव्रतः**—सत्य-प्रतिज्ञ, ९९९. **शुचिः**।

व्रताधिपः परं ब्रह्म भक्तानां परमा गतिः।
विमुक्तो मुक्ततेजाश्च श्रीमाञ्श्रीवर्धनो जगत् ॥१२३॥

१०००. **व्रताधिपः**, १००१. **परम्**, १००२. **ब्रह्म**, १००३. **भक्तानां परमा गतिः**, १००४. **विमुक्तः**, १००५. **मुक्ततेजाः**—शत्रुओं पर तेज छोड़नेवाले, १००६. **श्रीमान्**, १००७. **श्रीवर्धनः**—भक्तों की सम्पत्ति को बढ़ानेवाले, १००८. **जगत्**।

[म० भा०, अनु० पर्व अ० १७

को जाँचिए संभु तजि आन

को जाँचिए संभु तजि आन।

दीनदयालु भगत-आरति-हर, सब प्रकार समरथ भगवान ॥१॥
कालकूट-जुर-जरत सुरासुर, निज पन लागि कीन्ह विष पान।
दारुन-दनुज, जगत-दुखदायक, मारेउ त्रिपुर एकहीं बान ॥२॥
जो गति अगम महामुनि दुर्लभ, कहत, संत, स्रुति, सकल पुरान।
सो गति मरन-काल अपने पुर, देत सदासिव सबहि समान ॥३॥
सेवत सुलभ उदार कलपतरु, पारबती-पति परमसुजान।
देहु काम-रिपु राम-चरन-रति, तुलसिदास कहँ कृपानिधान ॥४॥

भगवान् शिव को छोड़ और किससे माँगना चाहिए? दीनों पर दया करनेवाले, भक्तों के दुःख हरनेवाले सब प्रकार से समर्थ आप ही साक्षात् परमेश्वर हैं ॥१॥

जब हालाहल विष की प्रचण्ड ज्वाला से देवता और दैत्य सभी जल उठे, तब अपनी दीनदयालुता का प्रण रखने के लिए आप उस विष को भी देखते-देखते पी गये। इसी प्रकार महाघोर त्रिपुर दानव जब संसार को अत्यन्त दुःख देने लगा, तब आपने एक ही बाण से उसका वध कर डाला ॥२॥

जिस मोक्ष-पद को संतजन, चारों वेद और अठारहों पुराण बड़े-बड़े मुनियों के लिए भी दुष्प्राप्य बताते हैं, उसे आप समभाव से, अपनी काशीपुरी में, मरने पर अनायास सभी को दे देते हैं ॥३॥

सेवा करने से आप सहज ही प्रसन्न हो जाते हैं। हे पार्वती-वल्लभ! हे परमज्ञानी! आप कल्प-वृक्ष के समान सबको मनचाहा फल देनेवाले उदार हैं। हे कामदेव को भस्म करनेवाले! हे कृपा-निधान! कृपाकर तुलसीदास को श्रीराम के चरणों की अनन्य भक्ति दीजिए ॥४॥

सिव, सिव, होइ प्रसन्न करु दाया।
करुनामय, उदार कीरति, बलि जाउँ, हरहु निज माया ॥१॥
जलज-नयन, गुन-अयन, मयन-रिपु, महिमा जान न कोई।
बिनु तव कृपा राम-पद-पंकज, सपनेहुँ भगति न होई ॥२॥
ऋषय, सिद्ध, मुनि, मनुज, दनुज सुर, अपर जीव जगमाहीं।
तव-पद-बिमुख न पार पाव कोउ, कलपकोटि चलि जाहीं ॥३॥
अहिभूषन, दूषन-रिपु-सेवक देव-देव त्रिपुरारी।
मोह-निहार-दिवाकर संकर, सरन-सोक-भयहारी ॥४॥
गिरिजा-मन-मानस-मराल, कासीस, मसान-निवासी।
तुलसिदास हरि-चरन-कमल वर, देहु भक्ति अविनासी ॥५॥

हे शिव ! हे शिव ! प्रसन्न होकर दया करो। आप करुणा के साक्षात् रूप हैं, आपकी कीर्ति दशों दिशाओं में फैली हुई है। मैं आपकी बलैया लेता हूँ, कृपा कर अपनी यह माया समेट लो ॥१॥

नेत्र आपके कमल के समान हैं, आप सर्व-सम्पन्न कहे जाते हैं। कामदेव को आप भस्म कर चुके हैं। आपकी असीम महिमा को कोई जान नहीं सकता। बिना आपकी कृपा के श्रीराम के चरणकमलों में, स्वप्न में भी, भक्ति नहीं हो सकती ॥२॥

ऋषि, सिद्ध, मुनि, मनुष्य, दैत्य, देव और जितने भी जगत् में प्राणी हैं, वे सब कल्प-कल्पान्त में भी, बिना आपके चरणारविन्दों का सेवन किये, संसार-सागर का पार नहीं पा सकते ॥३॥

सर्प आपके भूषण हैं। दूषण दैत्य के संहारक श्रीराम के आप अनन्य सेवक हैं। हे देवाधिदेव ! आपने बात-की-बात में त्रिपुरासुर का संहार कर डाला। हे शंकर ! आप अज्ञानरूपी पाला नष्ट करने के लिए साक्षात् सूर्य हैं। आप शरणागत जीवों का शोक और भय दूर कर देते हैं ॥४॥

हे काशीपते ! हे श्मशानवासी ! आप पार्वती के मन-मानस में विहार करनेवाले राजहंस हैं, और श्मशान-निवासी भी हैं। तुलसीदास को श्रीहरि के चरणारविन्दों में नित्य एकरस भक्ति का वरदान दीजिए ॥५

संकरं संप्रदं सज्जनानंददं, सैल-कन्या-वरं, परमरम्यं।
काम-मद-मोचनं, तामरस-लोचनं, वामदेवं भजे भावगम्यं ॥१
कंबु-कुन्देन्दु-कर्पूर-गौरं सिवं, सुन्दरं सच्चिदानन्दकंदं।
सिद्ध-सनकादि-योगीन्द्र-वृन्दारका, विष्णु-विधि-वन्द्य चरनारविन्दं ॥२
ब्रह्म-कुल वल्लभं, सुलभमतिदुर्लभं, विकटवेषं, बिभुं, वेदपारं।
नौमि करुनाकरं गरल गंगाधरं, निर्मलं, निर्गुनं, निर्विकारं ॥३
लोकनाथं, सोकसूल-निर्मूलिनं, सूलिनं, मोह-तम-भूरि-भानुं।
कालकालं, कलातीतमजरं, हरं, कठिनकलिकाल-कानन-कृसानुं ॥४
तज्ञमज्ञान-पाथोधि-घटसंभवं, सर्वगं सर्वसौभाग्यमूलं।
प्रचुर भव-भंजनं, प्रनतजन-रंजनं, दासतुलसी सरन सानुकूलं ॥५

कल्याणकारी, कल्याणदाता, सज्जनों को आनन्द देनेवाले, पार्वती के पति, अत्यन्त सुन्दर, कामदेव के गर्व को चूर करनेवाले, कमल के सदृश नेत्रवाले, केवल भक्ति से प्राप्त होनेवाले शिव को मैं भजता हूँ ॥१॥

शिवजी का शरीर कंबु, कुन्द, चन्द्र और कर्पूर के समान, क्रमशः सचिक्कण, कोमल, शीतल और सुगन्धित है। वे मंगलमय, लावण्य-मूर्ति आनन्दकन्द परब्रह्मस्वरूप हैं। उनके चरणकमलों की वंदना सिद्ध, सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार, बड़े-बड़े योगी, देवता, विष्णु और ब्रह्मा करते हैं ॥२॥

उन्हें ब्रह्मनिष्ठ पुरुषों का कुल प्रिय है। वे सज्जनों को सुलभ और दुर्जनों को दुर्लभ हैं। उनका वेश बड़ा विकराल है। वे विभु और वेदों के ज्ञान से परे हैं। ऐसे करुणामय विष (कण्ठ में) और गंगा (मस्तक पर) को धारण करनेवाले, निर्मल त्रिगुणातीत एवं निर्विकार शिव को मैं नमस्कार करता हूँ ॥३॥

वे लोकों के रक्षक, शोकों और विघ्न-बाधारूपी कंटकों को जड़ से उखाड़ फेंक देनेवाले त्रिशूलधारी एवं महान् मोहांधकार को नष्ट करनेवाले सूर्य हैं। वे काल के भी काल, कालातीत आवागमनरूप संसार के तथा घोर कलिकालरूपी वन को जला देनेवाले मूल अग्नि हैं ॥४॥

तत्त्ववेत्ता, अज्ञानरूपी समुद्र को पी जाने के लिए अगस्त्य-रूप सर्वान्तर्यामी, सब प्रकार के सौभाग्य के लिए जन्म-मरण-रूपी संसार के दुःखों के नाशकर्त्ता, शरणागतों को प्रसन्न करनेवाले, सदा सानुकूल शिवजी की शरण तुलसीदास है ॥५॥

मोह-तम-तरनि, हर रुद्र संकर सरन, हरन, मम सोक, लोकाभिरामं ।
बाल-ससिभाल, सुविसाललोचन-कमल, काम-सतकोटि-लावण्यधामं ॥
कम्बु-कुन्देन्दु-कर्पूर-विग्रह रुचिर, तरुन-रवि-कोटि तनु-तेज भ्राजै ।
भस्म सर्वांग अर्धांग सैलात्मजा, व्याल-नृकपाल-माला विराजै ॥२॥
मौलि संकुल जटा-मुकुट, विद्युच्छटा, तटिनि-वर-वारि हरि-चरन-पूतं ।
स्रवन कुंडल, गरल कंठ, करुनाकन्द, सच्चिदानंद वन्देऽवधूतं ॥३॥
सूल-सायक-पिनाकासि-कर, सत्रु-वन-दहन इव धूमध्वज, वृषभ-जानं ।
व्याघ्र-गज-चर्म-परिधान, विज्ञान-घन, सिद्ध-सुर-मुनि-मनुज-सेव्यमानं ॥
तांडवित-नृत्यपर, डमरु-डिंडिम प्रवर, असुभ इव भाति कल्यानरासी ।
महाकल्पान्त ब्रह्माण्ड-मंडल-दवन, भवन कैलास आसीन कासी ॥५॥
तज्ञ, सरवज्ञ, जज्ञेस, अच्युत, विभो, विस्व भवदंस-संभव पुरारी ।
ब्रह्मेन्द्र, चन्द्रार्क, वरुनाग्नि, वसु मरुत, जम, अरचि भवदंघ्रिसर्वाधिकारी ॥
अकल, निरुपाधि, निरगुन, निरंजन ब्रह्म, कर्म-पथमेकमज निर्विकारं ।
अखिल विग्रह, उग्ररूप, सिव भूप सुर, सर्वगत सर्व, सर्वोपकारं ॥७॥
ज्ञान, वैराग्य, धन-धर्म, कैवल्य-सुख, सुभग सौभाग्य सिव सानुकूलं ।
तलपि नर मूढ़ आरूढ़ संसार-पथ, भ्रमत भव-विमुख तव पाद-मूलं ॥८
नष्टमति, दुष्ट अति, कष्ट-रत, खेद-गत, दासतुलसी संभु सरन आया ।
देहि कामारि ! श्रीरामपद-पंकजे, भक्ति अनवरत गतभेद-माया ॥९॥

हे हर ! हे रुद्र ! हे शंकर ! आप शरणागतों का अज्ञानांधकार दूर करने के लिए साक्षात् सूर्य-रूप हैं। अतः हे लोकाभिराम ! आप मेरा शोक दूर कर दीजिए। आपके ललाट पर बाल चन्द्र सुशोभित

है। आपके बड़े-बड़े नेत्र कमल के समान हैं। सौ करोड़ कामदेवों के सदृश आप सौन्दर्य के स्थान हैं ॥१॥

आपका सुन्दर शरीर कम्बु (शंख), कुन्द, चन्द्र और कर्पूर के समान है, और उसका तेज करोड़ों सूर्य के समान है। आपने अंग-प्रत्यंग में भस्म धारण कर रखी है, और आधे अंग में हिमाचल-कन्या पार्वती शोभित हो रही हैं। साँपों और नर-कपालों की माला अलग ही निराली छटा दिखा रही है ॥२॥

मस्तक पर आप जटा-जूटों का मुकुट धारण किये हुए हैं। उस पर बिजली के समान चमकती विष्णु के चरण से पवित्र हुई गंगा की छटा और भी शोभा दे रही है। कानों में आप कुण्डल पहने हैं, और गले में हालाहल विष झलक रहा है। ऐसे करुणा के स्थान, सत्-चित्-आनन्दस्वरूप परमहंस शिव को मैं वन्दना करता हूँ ॥३॥

आपके हाथों में शूल, धनुष और तलवार हैं। शत्रु-रूपी वन को भस्म करने के लिए आप अग्निरूप हैं। बैल ही आपकी सवारी है। बाघ और हाथी का चर्म आपके वस्त्र हैं। तत्त्वज्ञान के आप मेघ हैं, महान् ज्ञानी हैं। सिद्ध, देव, मुनि, मनुष्य आदि आपकी सेवा करते हैं ॥४॥

ताण्डव नृत्य करते हुए आप सुन्दर डमरू को 'डिमडिम-डिमडिम' बजाते हैं। आप भासित तो होते हैं अशुभ (अशिव), किन्तु हैं श्रेयस् की मूर्ति, साक्षात् शिव। महाप्रलय के समय आप समस्त ब्रह्मांड को भस्म कर डालते हैं। कैलास पर तो आपका भवन है, और काशीपुरी में आप आसन लगाये विराजमान हैं ॥५॥

हे विभो ! आप तत्त्ववेत्ता, सर्वज्ञ तथा यज्ञों अर्थात् शुभ कर्मों के अधिष्ठाता हैं। हे पुरारे ! सारा संसार आपके अंशमात्र से उत्पन्न हुआ है। ब्रह्मा, इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, वरुण, अग्नि, वसु, मरुत और यम आपके चरणों की सेवा कर सर्वाधिकारी बने हैं ॥६॥

आप कला-रहित, उपाधि-रहित, सत्त्व, रजस् और तमस् इन तीनों गुणों से परे अविनाशी परब्रह्म हैं। आप कर्म-मार्ग में एक ही

हैं। आप अजन्मा और निर्विकार हैं। सारा ब्रह्माण्ड आपका ही रूप है। आपका स्वरूप वड़ा भयानक है। देवताओं के आप स्वामी हैं। सर्वान्तर्यामी, सर्वस्वरूप और सबका उपकार करनेवाले हैं आप ।।७।।

हे शिव ! जिस पर आप कृपा कर देते हैं, उसे ज्ञान, वैराग्य, धन, धर्म और मोक्ष का आनन्द और सुन्दर सौभाग्य अनायास मिल जाते हैं। फिर भी मूर्ख मनुष्य आपके चरणों का आधार छोड़कर सांसारिक मार्ग पर चलते हुए इधर-उधर भटकते फिरते हैं ।।८।।

हे शंभो ! तुलसीदास भ्रष्ट बुद्धिवाला, महान् दुष्ट, अत्यन्त दुखी और खिन्न आपकी शरण में आया है। हे मदनमर्दन। आप श्रीराम के चरण-कमलों में मुझे ऐसी अनपायिनी भक्ति दीजिए, जिससे मेरी मायाजनित भेद-बुद्धि का सर्वथा नाश हो जाये ।।९।।

□□

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय
वाराणसी।
आगत क्रमांक 2204
दिनांक

मण्डेलिया परमार्थ कोष

नियाजीराव काटन मिल्स ग्वालियर